वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय
कोटा

एम.जे.एम.सी. -6
दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि
(Audio-Visual Communication Technology)

दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि- 1

पत्रकारिता एवं जनसंचार स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम
(Master of Journalism & Mass Communication)

दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि

दक्षेस देशों में जनसंचार
अमेरिका और ब्रिटेन में टेलीविजन

1

पत्रकारिता एवं जनसंचार
स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम

दृश्य–श्रव्य जनसंचार प्रविधि – 1

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

* **प्रो. जी.एस.एल. देवड़ा**
  कुलपति
  कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा
  (अध्यक्ष समिति)
* **प्रो. अब्दुल वहीद खान**
  निदेशक (विकास एवं प्रशिक्षण)
  कॉमनवेल्थ सेण्टर ऑफ लर्निंग
  वैंकूवर (कनाडा)
* **राधेश्याम शर्मा**
  पूर्व-महानिदेशक
  माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता
  विश्वविद्यालय, भोपाल(म. प्र.)
* **डॉ. ओ.पी. केजरीवाल**
  निदेशक, नेहरू मेमोरियल म्यूजियम एण्ड लाइब्रेरी
  तीन मूर्ति भवन, नई दिल्ली
* **प्रो. ए.के. बनर्जी**
  पूर्व-अध्यक्ष
  पत्रकारिता विभाग
  बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
  वाराणसी
* **प्रो. जे.एस. यादव**
  भारतीय जनसंचार संस्थान
  नई दिल्ली
* **डॉ. भंवर सुराणा**
  ब्यूरो चीफ/ विशेष संवाददाता
  दैनिक हिंदुस्तान
  जयपुर
* **डॉ. रमेश जैन**
  अध्यक्ष-जनसंचार विभाग
  कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा
  (सचिव, समिति)

संयोजक

डॉ. रमेश जैन- अध्यक्ष, जनसंचार विभाग
कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ-संपादक एवं भाषा-संपादक

पाठ-संपादक
गोपाल सक्सेना
पूर्व निदेशक
सेन्टर प्रोडक्शन सेन्टर, दूरदर्शन, नई दिल्ली

भाषा-संपादक
डॉ. विष्णु पंकज
वरिष्ठ साहित्यकार-पत्रकार
जयपुर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रोफेसर (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

प्रोफेसर (डॉ.) अनाम जेटली
निदेशक
संकाय विभाग

योगेन्द्र गोयल
प्रभारी
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

पुनः उत्पादन : सितम्बर, 2009

सर्वाधिकार सुरक्षित: इस पाठ्यक्रम सामग्री का कोई भी अंश कोटा खुला विश्वविद्यालय/ वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति प्राप्त किए बिना या निम्योग्राफी (चक्रमुद्र) अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करना वर्जित है ।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, रावतभाता रोड, कोटा से प्राप्त की जा सकती है।

कुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा प्रकाशित

पाठ लेखक

1. **गोपाल सक्सेना**
मीडिया सलाहकार, नोएडा
पूर्व निदेशक, सेन्ट्रल प्रोडक्शन सेंटर (सी.पी.सी.)
दूरदर्शन, नई दिल्ली

2. **गोपाल गुप्ता**
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
नई दिल्ली

3. **शैलेन्द्र मोहन कुमार**
सूचना अधिकारी
नई दिल्ली

4. **सुभाष सोतिया**
संपादक-आजकल
नई दिल्ली

5. **प्रो. प्रदीप माथुर**
भारतीय जनसंचार संस्थान
अरुणा आसफल अली मार्ग, जे.एन.यू.
न्यू कैम्पस, नई दिल्ली

6. **श्याम माथुर**
उप संपादक
राजस्थान पत्रिका, जयपुर

7. **जी.सी. गर्ग**
पूर्व-स्टेशन इन्जीनियर
दूरदर्शन, जयपुर

8. **टीकम ठाकुर**
सहायक अभियन्ता
दूरदर्शन केन्द्र, जयपुर

9. **महेश पालीवाल**
सहायक इन्जीनियर
दूरदर्शन केन्द्र, जयपुर

10. **सत्यकाम**
रीडर-हिन्दी विभाग
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

11. **मुरली मनोहर मंजुल**
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
जोधपुर

12. **जगमोहन माथुर**
वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखक
नई दिल्ली

13. **राधेश्याम तिवारी**
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
जयपुर

14. **शांति प्रसाद अग्रवाल**
मीडिया सलाहकार एवं
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
गाजियाबाद

15. **रामकुमार**
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
कोटा

अनुवाद

रामकुमार
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
कोटा

खण्ड एवं इकाई परिचय

खंड परिचय

दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि का खंड एक आपके हाथ में है । आज दृश्य-श्रव्य जनसंचार माध्यमों का महत्व विशेष बढ़ गया है। अतः जनसंचार पाठ्यक्रम के शिक्षार्थियों को इस संबंध में व्यापक जानकारी रखना अनिवार्य है।

इस खंड में छः इकाइयां हैं- 1. नई सहस्त्राब्दी में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम, 2. भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम (विशेषताएं एवं प्रासंगगिकता), 3. भारत में रेडियो, 4. भारत में सिनेमा भाग-1, 5. भारत में सिनेमा भाग-2, 6. भारत में दूरदर्शन ।

इकाई परिचय

इकाई-1 **'**नई सहस्त्राब्दी में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम' में जनसंचार के आधुनिक माध्यमों पर चर्चा की गई है। 21वीं सदी के द्वार पर खड़े विश्व में लाखों लोग इन आधुनिक माध्यमों का उपयोग करने लगे है। अनुमान है "कि इन्टरनेट और कम्प्यूटर से जुड़े माध्यमों के प्रचलन की गति तेज होती जाएगी । वर्तमान युग एक सूचना युग है । हम ज्ञान - विज्ञान के विस्तृत होते और भौगोलिक सीमाएं तोड़ते सूचना युग में रह रहे हैं।

'भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम' (विशेषताएं एवं प्रासंगिकता) **इकाई-2** है । इस इकाई में आकाशवाणी और दूरदर्शन की कार्यशैली और उसके इतिहास की संक्षिप्त विवेचना की गई है । साथ ही 'प्रसार भारती निगम' पर भी प्रकाश डाला गया है।

इकाई-3 'भारत में रेडियो' की है । इस इकाई में रेडियों प्रसारण का शुभारम्भ, भारत में रेडियो प्रसारण का उद्भव, रेडियो की विकास-यात्रा, आकाशवाणी का कार्य-क्षेत्र, आकाशवाणी की विशिष्ट इकाइयां, आधुनिक सेवाएं तथा रेडियो की स्वायतत्ता पर व्यापक रूप से चर्चा की गई है।

इकाई-4 **'**भारत में सिनेमा भाग-1' से संबद्ध है । भारत में सिनेमा का आगमन, भारत में फिल्मांकन के प्रयास, पहला भारतीय कथाचित्र और दादा साहब फालके, मूल सिनेमा का दौर, मूक फिल्में और सैंसरशिप, सिनेमा में ध्वनि का आगमन आदि बिन्दुओं पर विस्तार से जानकारी दी गई है।

'भारत में सेनेमा भाग-2' इस खंड की **5वीं इकाई** है । इसमें समानान्तर सिनेमा, व्यवसायिक सिनेमा, नया दौर, नए फ़िल्मकार, फिल्मों की वितरण व्यवस्था, फिल्में सनेमाघरों तक कैसे पहुंचती हैं तथा संकट में है- सिनेमाघर पर विस्तृत चर्चा की गई है। इकाई-4 एवं 5 के आध्ययन के बाद आपकी भारत में सिनेमा के संबंध में अच्छी जानकारी हो जाएगी, ऐसी आशा है।

इकाई-6 'भारत में दूरदर्शन' की है। इस इकाई में दूरदर्शन के विकास को-अपेक्षा काल (1959 से 1981), महत्वपूर्ण प्रगतिकाल (1982 से 1990) तथा उपग्रहण आक्रमण काल (1991 से 2000) रेखांकित किया गया है। 'प्रसार भारती विधेयक', अधिनियम, परिभाषा, बोर्ड के अधिवेशन, संसदीय समिति, प्रसारण परिषद् आदि पर विस्तार से जानकारी दी गई है।

आशा की जाती है कि खंड एक की ये छः इकाइयाँ आपको जनसंचार प्रविधि के ज्ञान वृद्धि में साहयक होगी । आप इनके अध्ययन के पश्चात् एक कुशल एवं योग्य जनसंचारकर्मी बन पाएंगे।

पाठ्यक्रम - षष्ठ
खण्ड - 1

1

इकाई 1 नई सहस्त्राब्दी में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम	9–12
इकाई 2 भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम (विशेषताएं एवं प्रासंगिकता)	13–19
इकाई 3 भारत में रेडियो	20–33
इकाई 4 भारत में सिनेमा भाग-1	34–46
इकाई 5 भारत में सिनेमा भाग-2	47–56
इकाई 6 भारत में दूरदर्शन	57–70

इकाई 1 नई सहस्राब्दी में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम

बीती सदी के अन्तिम कुछ दशकों में माध्यमों के विकास पर दृष्टि डालें तो यह साक्ष्य स्पष्ट होगा कि इलेक्ट्रॉनिक्स माध्यमों ने प्रगति और उपलब्धियों का एक नया इतिहास रचा है। 20वीं सदी के अन्तिम तीन दशकों में निश्चित रूप से टेलीविज़न ने जनसंचार के क्षेत्र में एक क्रांति पैदा की है। उपग्रह (सेटेलाइट) टेलीविज़न ने तो एशियाई देशों के आकाश पर हमला किया है। 'वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इस संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है कि अभी टेलीविज़न आने वाले समय में माध्यमों के परिदृश्य पर केबल, डिजिटल, डाईरेक्ट-होम, उच्च परिभाषित (हाई-डेफिनिशन) एवं इंटर-एक्टिव से संबद्ध होगा।

दूसरी और कम्प्यूटर के माध्यमों से इंटरनेट के द्वारा सम्प्रेषण (कम्युनिकेशन का प्रचलन) भी अत्यधिक वृद्धि की ओर बढ़ रहा है। कभी मात्र ई-मेल का स्रोत यह संचार माध्यम, अब दृश्य एवं श्रव्य माध्यम (Audio-Visual Medium) बनने की तेज प्रक्रिया में है। अन्त: क्रियाशीलता (Interactive) के स्तर पर, वास्तव में नेट (Net) की क्षमता, बौद्धिक रूप में टेलीविजन के एक तरफा (वन-वे) सम्प्रेषण (कम्यूनिकेशन) से अधिक सन्तोषजनक है। इंटरनेट दरअसल अन्तरिक्ष (Cyber space) में फन्तासी (Fantacy) के एक नए संसार की संरचना करता है। टेलीविज़न और इन्टरनेट के बीच यह फासला और अन्तर है।

मार्शल मेसलूहन ने 1960 के दशक में यह भविष्यवाणी की कि आने वाले कई सालों तक टेलीविजन का वर्चस्व बना रहेगा। इन्टरनेट इसका स्थान नहीं ले सकता। यों हर माध्यम की अपनी सीमाएं और विशेषताएँ हैं। समय के साथ चीजें बदल रही हैं। रफ्तार बहुत तेज है। सूचनातन्त्र (इन्फॉर्मेशन टेक्नोलॉजी) के क्षेत्र में टेलीविजन, टेली-कम्यूनिकेशन तथा कम्प्यूटर आपस में एक-दूसरे से घुल मिल रहे हैं अर्थात् इनके बीच एक मिलन या गति की प्रक्रिया जारी है। इससे एक एक प्रकार की जनसंचार प्रणाली (Multi-Media Communication System) का प्रादुर्भाव हुआ है। सम्प्रेषण का सारा परिवेश बदल गया है।

सूचना-तंत्र में यह बदलाव, जीवन के विविध पक्षों को प्रमाणित करने लगा है और इसकी प्रसार गति भी तीव्र है। घर से कार्यालय तक, विश्वविद्यालय से अस्पताल तक, यात्रा से मनोरंजन तक यों चारों तरफ फैले जिन्दगी के विविध क्षेत्रों यह जन-माध्यम प्रणाली या नई बहु-माध्यम (Multi-Media) लेकिन भौगोलिक एवं अन्य सन्दर्भो में समय के साथ यह नई संचार प्रणाली के रूप में धारण करेगी और समाज, राजनीति, अर्थनीति एवं संस्कृति पर इस पर संचार क्रांति का क्या प्रभाव पड़ेगा, यह समय ही तय कर सकेगा। इन्टरनेट का प्रारूप प्रारम्भिक स्तर पर आकड़ों के आदान-प्रदान (data Exchange) के लिए हुआ। समय के साथ यह माध्यम अन्य प्रकार के नेटवर्क से जुड़ता गया जो कि दुनिया सम्प्रेषण एवं सूचना माध्यमों का प्रमुख आधार है। अमेरिका के एक शोध-सर्वेक्षण के अनुसार 1990 के आसपास वहां 24 मिलियन लोग इन्टरनेट का प्रयोग करते थे और 36 मिलियन लोग अन्तर्राष्ट्रीय-स्तर पर इन आधुनिकतम माध्यमों का उपयोग करने लगे थे। औकडों में भिन्नता हो सकती है। अलग-अलग

प्रकार की शोध के नतीजे भिन्न हो सकते हैं। लेकिन यह निश्चित है कि 21वीं सदी के द्वार पर खड़े विश्व में लाखों लोग इन आधुनिकतम माध्यमों का इस्तेमाल करने लगे हैं। अनुमान यह है कि इन इन्टरनेट और कम्प्यूटर से जुड़े माध्यमों के प्रचलन की रफ्तार तेज होती जाएगी। इलेक्ट्रॉनिक की दुनिया में इन्टरनेट और वेबसाईट्स आकड़ों के बड़े बैंक बनते जाने की ओर उन्मुख है। इलेक्ट्रॉनिक्स की इस ट्रांसमिशन के बढ़ते विकास से सूचना की दुनिया निरन्तर बदलाव के दौर में है।

इन्टरनेट सेवा द्वारा ध्वनि और दृश्य (ऑडियो एण्ड वीडियो) का संग्रहण साधारण टेलीफोन के जरिए सम्भव होने की दशा में है। प्रसारण के क्षेत्र में इस तेजी से बदलते नेटवर्क का उपयोग करने की रुचि में वृद्धि अंकित होने लगी है। अत: इन्टरनेट के जरिए त्वरित कार्यक्रमों का चयन करने के सन्दर्भ में इतनी प्रगति हो गई है कि विश्व के इन्टरनेट वेबसाइट की अन्त :क्रिया के माध्यम से रुकने (Pause), पुनः कार्य देखने (Replay) और आगे बढाने (Fast Forward) जैसे साधारण ऑडियो / वीडियो प्लेयर के कार्य इन्टरनेट पर संभव हो गए हैं। उपयोग करने वालों का अब इस सन्दर्भ में पूर्ण नियंत्रण है। अनेक प्रसारणकर्त्ता संस्थाएं अब इन्टरनेट पर आ गई हैं। आकाशवाणी ने समाचार, सामयिक-घटनाओं, संगीत, नाट्य एवं अन्य प्रकार के कार्यक्रमों के प्रसारण को अब इन्टरनेट से संलग्न कर दिया है। कोई भी व्यक्ति मल्टिमीडिया कम्प्यूटर के द्वारा अब इन कार्यक्रमों का लाभ उठा सकता है। मुक्त विश्वविद्यालय भी इन्टरनेट पर आ गए हैं।

25 फरवरी, 1998 से आकाशवाणी एवं दूरदर्शन ने अपने देश में अपने कार्यक्रमों के प्रसारण के साथ इन्हें इन्टरनेट पर उपलब्ध कराना (Feed करना) प्रारम्भ कर दिया था। इन्टरनेट पर प्रसारण का अर्थ है कि आप ऑडियो या वीडियो को अपनी मांग के अनुसार सुन और देख सकते हैं जो कि साधारण रूप से सीधे इन प्रसारण को सुनने और देखने की प्रक्रिया से बेहतर है। लेकिन इंटरनेट पर उपलब्ध इन कार्यक्रमों की गुणात्मकता में अभी फर्क है। प्रसारण के बीच अवरोध आ जाते हैं। इस समस्या का समाधान सम्भव है परन्तु इसके लिए उच्च लागत के ऑप्टिकल केबल नेटवर्क का ढांचा तैयार करना पड़ेगा। डिज़िटल टेलीफोन एक्सचेंजों और अति आधुनिक सॉफ्टवेयर की इसके लिए जरूरत है। बहरहाल, अभी चीजें एक बदलाव के दौर से गुजरने की प्रक्रिया में हैं और अभी यह एक प्रकार के प्रयोगात्मक स्तर पर है, जहां यह देखा जा रहा है कि वर्तमान-प्रसारण प्रणाली का स्थान इन्टरनेट पर प्रसारण-प्रणाली से किस प्रकार अपने प्रभाव के स्तर का भिन्न है। यद्यपि कम्प्यूटरों के इस्तेमाल की संख्या में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। 1995 तक पश्चिम यूरोप में 20 प्रतिशत लोगों के घरों में कम्प्यूटर का उपयोग होने लगा था। अभी जापान जैसे तकनीकी रूप से विकसित देश में भी घरों तक कम्प्यूटर की पहुँच का काम धीमा है। सैलफोन और पेजर की टेक्नोलोजी की स्थिति यूरोप से भिन्न है। अफ्रीका ही एक विशेष देश है जहां कम्प्यूटर का चलन अधिक हुआ है बाकी एशिया के देशों में कम्प्यूटर के माध्यम से जनसंचार क्रांति की पहुँच अशिक्षित और गरीब देशों में अभी बहुत कम है। आमतौर से इन्टरनेट के द्वारा सम्प्रेषण या कम्यूनिकेशन की क्रिया और इसके प्रचलन से नियमित रूप से इनके नियमित उपभोक्ता अधिक परिचित हो गए हैं। नेट की प्रकृति तो स्वतंत्र है। डेमोक्रेटिक है और इसमें मध्यम दर्जे के लोगों के लिए भी अवसरों की

कमी नहीं है। लेकिन अभी यह अवसर उन विशेष सुविधा प्राप्त लोगों की पहुंच तक सीमित है और उन्हें भी एक प्रकार के धुंधले सांस्कृतिक-प्रभाव का ही एहसास हो रहा है जो एक अस्पष्ट व्यवहार का सामना कर रहे हैं। बावजूद मल्टीमीडिया प्रणाली के विकास की गति के धीरे-धीरे बढ़ने के इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के विकास पर टेलीविजन का वर्चस्व बढ़ता जाएगा। समय की गति को देखा जाए तो यह बात तो निश्चित है कि सूचना-माध्यम दिन प्रतिदिन आधुनिक होते जाएंगे और इनका विस्तार भी होता जाएगा। यह क्रम तब तक जारी रहेगा जब तक कि विभिन्न प्रकार की सूचना-टेक्नालोजी का आपस में किसी बिन्दु पर एकीकरण न हो।

यूनेस्को की रिपोर्ट के मुताबिक 1990 के प्रारम्भ में दुनिया में एक मिलियन टेलीविजन सेट थे। एशिया में इनकी वृद्धि दर पांच प्रतिशत थी। लेकिन एशिया के बाजारों के मुक्त होने के साथ ही इसके आकाश पर विदेशी उपग्रह टेलीविजन चैनल्स का आक्रमण होने लगा। केबल कम्पनियों ने इसे और आगे बढ़ाया। इसने जनसंचार या माँस मीडिया की परम्परा की धारणा को ही बदल दिया। एक मिश्रित श्रोता जगत् (मॉस ऑडियन्स) को सीमित सूचना भेजे जाने की धारणा का अर्थ बदल दिया। अब टी.वी. के विभिन्न चैनलों से विशेषज्ञता के साथ के साथ खास प्रकार की सूचनाएं एवं कार्यक्रम एक खास प्रकार के श्रोताओं एवं दर्शकों को उपलब्ध होने लगी हैं। श्रोता या दर्शकों के समक्ष भी अब अपनी पसंद के अनुरूप कार्यक्रम सुनना या देखना या चयनित करना सम्भव है। अब हाथ में रिमोट कन्ट्रोल की 'डिवाईस' या सुविधा है और इसका बटन दबाकर दर्शक अपनी पसंद के अनुरूप विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों के संसार को देखने में समर्थ है। यह एक ऐसी सुविधा है जो टेलीविजन के वर्तमान एवं भविष्य के विकास की सम्भावनाएँ प्रकट करती है।

विभिन्न क्षेत्रों में टेलीविजन के फैलते प्रभाव और इसके बदलते स्वरूप के संदर्भ में यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए कि यह अब पूरी तरह मुक्त है और सरकारों में कहीं कमी आने लगी है। दरअसल इस माध्यम में भारी प्रतिस्पर्धा और बाजारों के खतरों का सामना करने के मुद्दे भी इनसे जुड़े हैं। सी.एन.एन., बी.बी.सी., जी.टी.वी., एनएचके, एनटीवी, टीवीएस, टीवी एशिया, टीवी टोकियो, एशिया पेसिफिक आदि विभिन्न टीवी नेटवर्क संस्थानों के बीच एक प्रतिस्पर्धा का दौर है। एक अनुमान के अनुसार 1993-1995 में टेलीविजन प्रोग्रामिंग पर 80 मिलियन अमेरिकी डॉलर के बराबर खर्चा हुआ और 10 प्रतिशत की सालाना वृद्धि दर से यह खर्चा बढ़ने की ओर है। डिजिटल कम्प्रेशन या अंकों के इस विज्ञान के अधिक उन्नत होने और प्रसारण टेक्नॉलजी के विकसित होने के साथ-साथ उपग्रह माध्यमों से आने वाले समय में ऐसी चैनल्स की संख्या बढ़कर 200 से 500 के बीच हो जाने की संभावना है। यह संख्या वर्तमान 30 या 40 चैनलों के अतिरिक्त हो सकती है। इस प्रकार ' रिमॉट कन्ट्रोल ' रखने वालों को चयन सुविधा में इजाफा होने के संकेत है। ऐसे कम्प्यूटर भी उपलब्ध होंगे जो दर्शक की अपनी वरीयता या ' परिप्रेक्ष्य ' के अनुरूप काम करें। उपभोक्ता की सुविधा और पसंद पर आधारित ऐसे कम्प्यूटर कम्पनियों को है जहां कम्प्यूटर एक मानव अर्थात् ' ह्यूमन-एजेंट ' के रूप में काम करें और कम्प्यूटर की स्क्रीन या पर्दे पर बोलते ही कम्प्यूटर प्रतिक्रिया करें। यों मल्टीमीडिया के विभिन्न स्त्रोतों को एकाकार करके कम्प्यूटर की सेवा को कुछ ऐसा बनाने के प्रयास जारी है जहां

कम्प्यूटर दर्शक को उसके नाम से पुकारे और पूछे की आदेश दें, आपकी क्या जानने की या देखने की इच्छा है, रुचि है? ताकि बन्दा उसी के अनुरूप सूचना या कार्यक्रम प्रस्तुत कर सके। बन्दा याने कम्यूटर। यदि यह चिट्टी-पत्री या मेला है तो कम्प्यूटर उसे खोले और पढे। सॉफ्टवेर के बड़े दिग्गज और बड़ी-बड़ी कम्पनिया दुनिया में यों कम्प्यूटर के द्वारा दृश्य-जगत के यथार्थ को 'साईबर-स्पेस' या अन्तरिक्ष में यथार्थ बनाकर फैलाने की चेष्टा में है। सगीत या अन्य कार्यक्रमो मे सारे विश्व की मनोरंजन की भूख को मिटाने के लिए 'ईन्फो-एन्टरटेनमेंट' का सपना साकार करने की चेष्टाएं जारी हैं।

कई सरकारें और भविष्यवक्ता एक विश्वीय शिक्षा प्रणाली, दूरस्थ स्थान से शल्य-चिकित्सा करने टेलीकन्सल्टिंग आदि विभिन्न प्रकार के नए साधन और प्रजातियो के ईजाद और प्रचलन की बातें भी करते हैं। लेकिन माध्यमों की इस बदलती दुनिया पर प्रारम्भिक स्तर पर कब्जा उनका है जिनका हित व्यावसायिकता से जुड़े है। इसलिए व्यावसायिकता ही उपभोक्ताओ की धारणाओं का गठन करने और उनके सोच को कोई दशा देने का काम करेंगे। यही तथ्य है जो भावी जनसंचार माध्यमों और मल्टीमीडिया के भाग्य का फैसला करेगा।

लेकिन अब नए माध्यमों के विकास (Evolution) की गति अपेक्षा से कम और धीमी होगी। इसका कारण है कि इस प्रकार के माध्यमों के इस्तेमाल का काम शुरू करना बड़े और धनी देशों के लिए ज्यादा संभव है क्योंकि इनको शुरू करने में काफी धन व्यय करना होता है। दूसरा कारण इस प्रकार के माध्यमों के आगे बढ़ने में अवरोध इसलिए भी आएंगे क्योंकि विगत का अनुभव यह बताता है कि विभिन्न मल्टीमीडिया के बीच सामंजस्य के प्रयासों के बावजूद उनके उपयोग से जो परिणाम सामने आए वे बहुत ज्यादा अपेक्षा के अनुरूप नहीं रहे। जापान में आठ यूरोपियों देशों के बीच संयुक्त प्रयासों से शुरू किया गया टेलीकम्यूनिकेशन कार्यक्रम और प्रयोग हतोत्साह करने वाला साबित हुआ।

इस प्रकार सम्प्रेषण की ये आधुनिक प्रक्रियाएं अपनी कुछ सीमाएं भी लिए हुए है और वे केबल तथा उपग्रह की सीमाओं से जुड़ी हैं। लेकिन यह तो तय है कि वर्तमान युग एक सूचना-युग है। हम ज्ञान-विज्ञान के विस्तृत होते और भौगोलिक सीमाएं तोड़ते सूचना-युग में रह रहे हैं।

इकाई 2 भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम (विशेषताएं एवं प्रासंगिकता)

भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों में आकाशवाणी और दूरदर्शन प्रमुख हैं। दोनों ही अब 'प्रसार भारती निगम' के अन्तर्गत हैं। इससे पहले वे सूचना और प्रसारण मंत्रालय के नियंत्रण में अलग-अलग संगठन के रूप में कार्यरत थे। सन् 1982 में भारत में उपग्रह युग के सूत्रपात के साथ ही दोनों ही माध्यम निरन्तर प्रगति करते हुए आज इस स्थिति में आ गए हैं कि उनके प्रसारण देश-विदेश में सुने और देखे,जा सकते हैं। पिछले दस वर्षो में देश में केबल टेलीविजन का समान्तर रूप से विकास हुआ है। सरकारी उदारीकरण की नीति के कारण कई निजी उघमियों ने इस अवधि में बहुत से चैनल स्थापित किए हैं। इनके कार्यक्रम भी देश-विदेश में देखे जा रहे हैं।

भारत में सरकार ने प्रसारण तंत्र का उपयोग सामाजिक परिवर्तन लाने की दिशा में एक कारगर माध्यम के रूप में किया है। इसका इतिहास तीन खंडों में बांटा जा सकता है। सन् 1923 से 1947 तक का प्रारंभिक काल जो ब्रिटेन के औपनिवेशिक प्रशासन के अधीन रहा। दूसरा काल स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद सन् 1976 तक का था। इस अवधि में रेडियो का अभूतपूर्व विकास 'हुआ। टेलीविजन के प्रसारण को भी एक नई दिशा मिली। तीसरा काल सन् 1976 के बाद प्रारंभ हुआ जब टेलीविजन अपने शैशव से विकसित होकर एक अलग संगठन बना। इसके पश्चात् आकाशवाणी और दूरदर्शन का इतिहास दोनों ही माध्यमों के राष्ट्रव्यापी प्रसार और प्रभाव-वृद्धि की गाथा है। अब हम इस परिप्रेक्ष्य में विस्तृत चर्चा करेंगे।

प्रथम चरण-1923-1947

भारत में रेडियो का प्रारंभ सन् 1923-24 में निजी तौर पर हुआ जब मुम्बई, कलकत्ता और चेन्नई में एक-एक रेडियो क्लब खोला गया। दो-तीन घंटों के प्रसारण में मुख्य रूप से संगीत और वार्ताओं का समावेश किया जाता था। लेकिन पर्याप्त वित्तीय सहायता न मिलने के कारण सन् 1927 में इन केन्द्रों को बन्द कर दिया गया। उसी वर्ष तत्कालीन भारत सरकार ने इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी (आई.बी.सी) नामक संगठन की स्थापना की। इसके तत्वावधान में मुम्बई और कलकत्ता में एक-एक रेडियो स्टेशन खोला गया। लेकिन तीन वर्ष के अन्दर ही यह संगठन बन्द हो गया। कारण था, बढ़ता खर्च और पूंजी की कमी। लेकिन आई.बी.सी. के बंद होने से लोगों में रोष पैदा हुआ। तत्पश्चात् सरकार ने इसकी संपत्ति को अपने अधिकार में लेकर भारतीय प्रसारण सेवा का गठन किया। तब से 'प्रसार भारती' का गठन होने तक प्रसारण पूर्णत: सरकारी नियंत्रण में रहा है। सन् 1936 में दिल्ली में प्रसारण केन्द्र स्थापित हुआ। उसी वर्ष भारतीय प्रसारण सेवा का नाम बदल कर 'ऑल इण्डिया रेडियो' (आकाशवाणी) किया गया और इसके लिए एक नई पहचान ध्वनि (सिगनेचर ट्यून) भी आरंभ की गई जो आज भी जारी है। राष्ट्रीय स्तर पर दिल्ली ही प्रसार का केन्द्र बिन्दु बना।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान रेडियो-प्रसारण का महत्व और अधिक बढ़ा। सन् 1939 तक पूरा भारत शॉर्ट वेव प्रसारण की परिधि में आ गया और कार्यक्रमों का ढांचा युद्धकाल की आवश्यकताओं के अनुरूप बदल दिया गया। इसी अवधि में समाचार और राजनीतिक समीक्षा के कार्यक्रमों के अतिरिक्त सामयिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पूर्वोत्तर और पश्चिमोत्तर भागों के निवासियों के लिए विशेष प्रसारणों की व्यवस्था की गई।

युद्ध समाप्ति के तुरन्त बाद भारत में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जबर्दस्त जन-आन्दोलन आरंभ हो गया। ऐसी स्थिति में रेडियो को जहां लोगों की आकांक्षाओं और भावनाओं का प्रतिबिम्ब बनना था वहीं इसे अपने उपनिवेशवादी मालिकों के हितों की रक्षा भी करनी थी। आकाशवाणी ने संक्रमण के इस काल में अपने कार्यक्रमों में वस्तुनिष्ठता और संतुलन बनाए रहकर विश्वसनीयता निभाई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उसकी छवि के कारण लोगों में उसकी लोकप्रियता लगातार बनी रही।

द्वितीय चरण-1947-1976

भारतीय प्रसारण के इतिहास में यह काल सबसे महत्वपूर्ण है। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद, सत्ता हस्तानन्तरण के समय देश में अराजकता की स्थिति व्याप्त थी। भारत का विभाजन हो रहा था और सर्वत्र कटुता का वातावरण था। एक ओर जहां और समुदायों के बीच दंगे और रक्तपात हो रहे थे वहीं नव-निर्मित पाकिस्तान और विभाजित भारत से धर्मावलम्बियों का पलायन एक दूसरे के यहां हो रहा था। असंख्य लोग धार्मिक कट्टरता का शिकार होकर मारे जा रहे थे। संपत्तियों का भयानक विनाश जारी था। ऐसी स्थिति में आकाशवाणी ने सांप्रदायिक कटुता को कम कर शान्ति और सद्भावना बनाए रखने में महत्वपूर्ण काम किया।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद आकाशवाणी की महान् उपलब्धि थी विदेशी सरकार के भोंपू की छवि से उभर कर स्वाधीन भारत की आवाज के रूप में मान्यता प्राप्त करना। इसके लिए लम्बे समय की कार्य-योजना बनाई गई थी। इसमें लोगों की भागीदारी और उनके विचारो की ईमानदारी से अभिव्यक्ति को सुनिश्चित किया गया था। आकाशवाणी के प्रसारणों में ऐसे समाचारों को ही लिया जाता था जिनसे सांप्रदायिक सौहार्द बड़े तथा समुदायों के बीच कटुता और वैमनस्य मिट सके। उन प्रयासों पर विशेष ध्यान दिया जाता था जो देश में शान्ति और सद्भावना स्थापित करने की दिशा में किए जा रहे थे। सन् 1976 तक भारत में आकाशवाणी के केन्द्रों की संख्या बढ़कर 74 हो गई।

देश में प्रसारण के इतिहास में वर्ष 1976 इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि उसी समय यहां टेलीविजन को भी जनसंचार व्यवस्था का एक सफल, सक्षम माध्यम समझा जाने लगा। प्रयोग के तौर पर वैसे तो भारत में टेलीविजन सन् 1951 में ही आ गया था लेकिन सन् 1976 से पहले इसकी भूमिका मूल रूप से सामाजिक विकास और अनौपचारिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार तक ही सीमित थी। फिर इससे पूर्व, टेलीविजन का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व भी नहीं था क्योंकि यह ऑल इण्डिया रेडियो का एक भाग था। सन् 1960 में एक सरकारी सर्वेक्षण का निष्कर्ष था कि टेलीविजन प्रसारण अपनी सीमित पहुंच के बावजूद काफी लोकप्रिय था । लोगों की बढ़ती मांग पर सरकार ने 15 अगस्त, 1965 से कार्यक्रमों की अवधि बढ़ाकर एक घंटा कर दी। सन्

1972 से 1975 के दौरान क्रमशः मुम्बई, कलकत्ता और चेन्नई में टेलीविजन केन्द्रों की स्थापना हुई। भौगोलिक दृष्टि से आज न केवल सम्पूर्ण भारत, बल्कि एशिया के अनेक देशों में, दूरदर्शन की पहुंच है।

तृतीय चरण – 1976 से आज तक

स्मरण रहे, दूरदर्शन शब्द टेलीविजन का शाब्दिक अनुवाद है । टेली का अर्थ है दूर और विजन का तात्पर्य है दृश्य। सन् 1982 में पहली बाद दिल्ली को स्वदेश निर्मित इंसैट- 1 उपग्रह के माध्यम से देश के विभिन्न भागों में स्थित ट्रांसमीटरों से जोड़ा गया था। उसी वर्ष रंगीन प्रसारणों की शुरुआत हुई। दूरदर्शन का विस्तार कितना अधिक हुआ इसकी कल्पना इस तथ्य से की जा सकती है कि 1980 के दशक के मध्य काल में एक समय ऐसा भी था जब देश में प्रत्येक दिन कहीं न कहीं दूरदर्शन का एक केन्द्र स्थापित हो रहा था। दूरदर्शन के 1060 ट्रांसमीटर कार्यरत हैं। इसी प्रकार, आकाशवाणी का निरन्तर विकास हो रहा था। इस समय उसके लगभग 200 केन्द्र कार्यरत हैं जिन्होंने देश की 98 प्रतिशत आबादी और 90 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल कवर कर लिया है।

इलेक्ट्रॉनिक जनसंचार के इन दोनों माध्यमों के विकास में एक मौलिक अंतर रहा है। दूरदर्शन में जहां सारा जोर रिले ट्रांसमीटरों की स्थापना कर उन्हें दिल्ली केन्द्र से जोड़ने पर रहा, वहीं आकाशवाणी में ऐसे केन्द्रों की स्थापना पर बल दिया गया जहां कार्यक्रमों का निर्माण हो सके। सन् 1988 में नई दिल्ली में आकाशवाणी के राष्ट्रीय चैनल की स्थापना की गई। यह चैनल उपग्रह से सीधा जुड़ा होने के कारण स्वतंत्र रूप से कार्यरत है। इसके कार्यक्रम प्रतिदिन शाम सात बजे से प्रारंभ होकर अगले दिन प्रातःकाल छह बजकर दस मिनट तक प्रसारित होते है और लगभग पूरे देश में सुने जा सकते हैं। इस रात्रिकालीन सेवा को प्रारंभ करने का उद्देश्य यह था कि जो लोग दिन में व्यस्त होने के कारण सूचना और मनोरंजन से वंचित रहते हैं वे रात में इस कमी को पूरा कर सकें। आकाशवाणी के सभी केन्द्र मध्यरात्रि के बाद प्रातःकाल तक अपना प्रसारण बन्द कर देते हैं । उस समय अकेला राष्ट्रीय चैनल ही श्रोताओं को हर घंटे हिन्दी और अंग्रेजी समाचारों के अतिरिक्त मनोरंजन के विविध कार्यक्रम प्रस्तुत करता है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब लोगों को किसी महत्वपूर्ण राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय घटना की सूचना पहली बार इसी चैनल से मिली।

आचार-संहिता

आकाशवाणी और दूरदर्शन दोनों ही एक निश्चित आचार-संहिता के अंतर्गत काम करते हैं। किसी भी प्रसारण-संस्था का प्रमुख उद्देश्य होता है लोगों को सही सूचना देना तथा अपने लक्ष्य कार्यक्रमों से उनका ज्ञानवर्धन तथा मनोरंजन करना। दोनों ही प्रसारण तंत्र इस लक्ष्य के प्रति समर्पित हैं। प्रसारण की आचार संहिता के अनुसार कई बातें निषिद्ध हैं-

1. गलत या भ्रामक तथ्यों का प्रसारण
2. मित्र देशों की आलोचना
3. अश्लील तथा उत्तेजक कार्यक्रमों की प्रस्तुति

4. धार्मिक विचारों को ठेस पहुंचाना
5. किसी व्यक्ति विशेष अथवा संस्था को बदनाम करना
6. हिंसा को बढ़ावा देना
7. न्यायालयों की अवमानना
8. राष्ट्रपति, राज्यपालों और न्यायपालिका के विरुद्ध विचारों की अभिव्यक्ति
9. किसी राजनीतिक दल का नाम लेकर उसकी आलोचना
10. केन्द्र या राज्य सरकार की दुर्भावनापूर्ण आलोचना और
11. भारत के संविधान के प्रति असम्मान प्रदर्शन

'प्रसार भारती' बन जाने के बाद भी आकाशवाणी और दूरदर्शन अपने वित्तीय संसाधनों के लिए काफी हद तक भारत सरकार पर आश्रित हैं। पहले रेडियो और टी.वी. सेटों पर जो लाईसेंस तथा उत्पाद शुल्क लगता था। उसे भारत की समाहित निधि में जमा किया जाता था। दोनों ही संगठनों को व्यावसायिक विज्ञापनों से जो आय प्राप्त होती थी, उसे भी इसी कोष में जमा किया जाता था। संसद में प्रतिवर्ष बजट पास होता था उसमें आकाशवाणी और दूरदर्शन के आय-व्यय का भी अनुमोदन होता था, उसे पूर्णत : हटा लिया गया। टी.वो सेटों पर केवल उन्हें खरीदते समय एक बार लाइसेंस शुल्क लगता है। अब संसद में दोनों संगठनों के बजट प्रावधान सूचना और प्रसारण मंत्रालय के लिए आवंटित की जाने वाली राशि के अन्तर्गत ही होते हैं। यह व्यवस्था उस समय तक जारी रहेगी जब तक 'प्रसार भारती' वित्तीय दृष्टि से पूर्णत : आत्म-निर्भर नहीं हो जाता।

प्रासंगिकता

सन् 1982 में उपग्रह युग के सूत्रपात के बाद भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम के क्षेत्र में क्रांतिकारी विकास हुआ है। आकाशवाणी और दूरदर्शन यद्यपि अभी भी सबसे बड़े संगठन के रूप में कायम है, लेकिन इस दौरान भारतीय दर्शकों को समाचारों और मनोरंजन के लिए अन्य अनेकानेक देशी और विदेशी चैनल भी उपलब्ध हो गए हैं। केबल टी.वी. का अभूतपूर्व विस्तार हुआ है और सभी छोटे-बड़े नगरों में लोगों को अपने मनोवांछित चैनल उपलब्ध हो गए हैं। रेडियो-प्रसारण में भी आकाशवाणी के कई विकल्प उपलब्ध हैं। जैसे बी.बी.सी. लंदन, ड्वाइचा वैला, जर्मनी रेडियो, एन.एच.के. टोकियो आदि। इन संगठनों से हिन्दी सहित अन्य अनेक भारतीय भाषाओं में समाचार तथा मनोरंजन के कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। इनकी रूपरेखा भारत में उनके श्रोताओं के अनुकूल होती है। अंतर्राष्ट्रीय समाचारों के साथ-साथ अब वे भारत की राजनीतिक, आर्थिक तथा अन्य विविध गतिविधियों को भी अपेक्षाकत अधिक कवरेज देते हैं। विश्लेषणात्मक संवादों के जीवंत कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए जाते हैं।

कई बार भारतीय श्रोताओं को लगता है कि विदेशी रेडियो चैनल आकाशवाणी की अपेक्षा सब कुछ ठीक-ठीक बताते हैं, कुछ छिपाते नहीं। इससे आकाशवाणी और दूरदर्शन की विश्वसनीयता पर आंच आती है। लोगो को लगता है जैसे सरकारी नियंत्रण में होने के कारण कई बार इन्हें सच बोलने से रोका जाता है और जब वे वस्तुत : सच्चाई प्रकाश में लाते हैं तब

तक विदेशी प्रसारण संगठनों से असली बात लोग बहुत पहले ही जान चुके होते हैं। ऐसा नहीं कि आकाशवाणी और दूरदर्शन के प्रसारण-कर्मी अपनी विश्वसनीयता बनाए रखना नहीं चाहते हैं। लेकिन राजनीतिक और प्रशासनिक हस्तक्षेप के कारण उन्हें बहुधा उपहास का पात्र बनना होता है। इस प्रसंग में दो उदाहरण पर्याप्त होंगे। 31 अक्टूबर, 1984 को नई दिल्ली में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या हुई थी। विश्व के सभी रेडियो, टी.वी. संगठनों ने भारतीय समय के अनुसार प्रात: ग्यारह बजे से पहले ही उनकी मृत्यु का समाचार दे दिया था और पूरी दुनिया के श्रोता जान गए कि वास्तव में हुआ क्या था। जबकि आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से उनकी मृत्यु का समाचार शाम छह बजे से पहले नहीं दिया जा सका जबकि घटना सवेरे हुई थी। दूसरी घटना 21 मई, 1991 को राजीव गांधी की हत्या से संबंधित है। राजीव गांधी उस समय विपक्ष के नेता के रूप में चुनाव अभियान पर तमिलनाडु में थे। उनकी हत्या एक अंतर्राष्ट्रीय षड्यंत्र के तहत चेन्नई के निकट श्रीपेरंबुदुर नामक स्थान पर रात 10 बजे के आस-पास हुई थी। इस सनसनीखेज घटना के बारे में जहां पूरी दुनिया के सभी प्रसारण माध्यमों ने अपने कार्यक्रम रोककर श्रोताओं और दर्शकों को तत्काल जानकारी दी थी, वहीं आकाशवाणी और दूरदर्शन से यह समाचार कई घंटे बाद दिया गया। किसी अति महत्वपूर्ण समाचार को यदि इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से तत्काल प्रसारित न किया जाए तो उसकी उपयोगिता क्या रह जाती है?

इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों की सबसे बड़ी विशेषता है व्यापक प्रसार-प्रचार करने की क्षमता। यदि इसका समुचित उपयोग नहीं किया गया तो निश्चय ही उन लोगों की काबलियत पर संदेह किया जाएगा जो इन्हें चलाते हैं। अपनी विश्वसनीयता खोने का दुष्परिणाम यह होता है कि श्रोता या दर्शक उनसे विमुख होकर दूसरे चैनलों की ओर उन्मुख होने लगते हैं और उन्हें अपने ही देश की घटनाओं के बारे में विश्वस्त रूप से जानने के लिए विदेशी प्रसारण संगठनों पर निर्भर करना पड़ता है। मनोरंजन के कार्यक्रम तो अपने स्थान पर ठीक हैं, लेकिन समाचारों के साथ जहां खिलवाड़ हुआ हो तो सारा प्रसारण तंत्र ही बदनाम हो जाता है।

'प्रसार भारती निगम' गठित करने की पृष्ठभूमि यह थी कि आकाशवाणी और दूरदर्शन पेशेवर के रूप में तब तक काम नहीं कर सकते जब तक उन्हें वैधानिक रूप से प्रतिदिन की राजनीतिक दखलंदाजी से मुक्त न कर दिया जाए। दोनों माध्यमों को स्वायत्तता प्रदान करने की बात पुरानी है। सन् 1988 से पहले केन्द्र और अधिकतर राज्यों में कांग्रेस का शासन था। उस समय के विपक्षी दलों का बहुधा आरोप होता, था कि तत्कालीन सत्तारूढ़ पक्ष ने अपने राजनीतिक लाभ के लिए दोनों ही माध्यमों का जबरदस्त दुरुपयोग किया था। उन्होंने अपने चुनाव घोषणा-पत्र में अन्य बातों के अतिरिक्त यह संकल्प भी व्यक्त किया था कि सत्ता में आने के बाद वे आकाशवाणी और दूरदर्शन को सरकारी नियंत्रण से पूर्णत: मुक्त कर देंगे ताकि भविष्य में कोई भी राजनीतिक दल अपने शासन के दौरान उनका दुरुपयोग अपने लाभ के लिए न कर सके।

मार्च 1988 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस के स्थान पर पांच दलों के एक गठबंधन जनता पार्टी को सत्ता मिली। 'प्रसार भारती' तभी से चर्चा का विषय रहा है। उस सरकार के सूचना और प्रसारण मंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी ने अपने नीतिगत व्यक्तव्य में पहली बार सन्

1977 में आकाशवाणी और दूरदर्शन के लिए स्वायत्तता की वकालत की थी। इसके लिए 'प्रसार भारती' अधिनियम के बारे में एक श्वेत पत्र भी जारी किया गया था। पर उस सरकार ने अपनी राजनीतिक विवशताओं के कारण उस पर अधिक ध्यान नहीं दिया। सन् 1980 से 1984 के दौरान इंदिरा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस फिर सत्ता में रही। लेकिन उसने इसके बारे में चुप्पी साध ली। सन् 1984 से 1989 तक केन्द्र में राजीव गांधी के नेतृत्व में इसी दल का शासन कायम रहा। उसने भी आकाशवाणी और दूरदर्शन की स्वायत्तता देने की दिशा में कुछ नहीं किया। बल्कि इस दशक में दोनों माध्यमों, विशेषकर दूरदर्शन का इन प्रधानमंत्रियों की व्यक्तिगत छवि बनाने में खुलकर दुरुपयोग हुआ। सन् 1989-90 के दौरान केन्द्र में विश्वनाथ प्रतापसिंह के नेतृत्व में गैर-कांग्रेसी सरकार सत्ता में रही। उसके सूचना और प्रसारण मंत्री श्री पी.उपेन्द्र ने संसद में प्रसार भारती अधिनियम 1990 प्रस्तुत किया। सन् 1991-96 के दौरान श्री नरसिम्हा राव के नेतृत्व में कांग्रेस शासन ने इस अधिनियम की अधिसूचना जारी नहीं की। 'प्रसार भारती' को एक बार फिर 'फ्रिजर' से निकालने का श्रेय तो सन् 1996-97 के बीच सत्तारूढ़ संयुक्त मोर्चा के सूचना और प्रसारण मंत्री श्री जयपाल रेड्डी को ही जाता है। उन्होंने इस अधिनियम को दो संशोधनों के साथ सूचित कर दिया। संशोधनों में 'प्रसार भारती' के क्रिया कलापों की देख-रेख के लिए प्रसारण परिषद और 22 सदस्यों की संसदीय समिति का समाप्त करने की व्यवस्था थी। सन् 1998-99 में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली केन्द्र की गठबंधन सरकार ने एक अध्यादेश द्वारा इन दोनों समितियों को फिर से बहाल कर दिया। अभी 'प्रसार भारती' का स्वरूप निश्चित नहीं हो पाया है। कहने को तो यह निगम का औपचांरिक रूप ले चुका है लेकिन इसकी स्वायत्तता वास्तविक रूप में कितनी होगी, इसका निर्धारण भविष्य में ही हो पाएगा। समकालीन सरकार का सोचना है कि सन् 1997 में जिन परिस्थितियों में 'प्रसार भारती' की परिकल्पना की गई थी, वे अब पूर्णत: बदल चुकी हैं। किन्तु 'प्रसार भारती' को एक स्वतंत्र प्रसारण नेटवर्क का स्वरूप न देना अथवा उसमें टालमटोल करना बेईमानी होगी और मीडिया के प्रति अन्याय होगा। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर आंच आने की अब कोई आशंका नहीं रह गई है। खुला आकाश की राष्ट्रीय नीति के कारण भारत के दर्शकों के लिए अब चैनलों की भरमार है। ऐसे में सरकार को लोगों तक अपनी बात पहुँचाने का अधिकार होना वांछनीय है। फिर केन्द्र या राज्यों में सत्ता किसी दल विशेष का एकाधिकार भी अब नहीं रहा। लगभग प्रत्येक राजनीतिक दल अब सत्ता में भागीदार है चाहे वे केन्द्र में हो या राज्यों में। निजी चैनलों की प्रतिस्पध्दा में दूरदर्शन तभी टिक सकता है जब वह अपनी गुणवत्ता और संतुलन बनाए रखकर देश का प्रतिबिम्ब बना रहे। सत्तारूढ़ गठबंधन का यह भी मानना है कि सरकार के स्वामित्व में रहने के कारण ही आज पूरे देश में आकाशवाणी और दूरदर्शन की अचल संपत्ति 70 करोड़ रुपए से भी अधिक मूल्य की है। इसलिए किसी भी सरकार के लिए उसे अपने नियंत्रण से खो देना अदूरदर्शितापूर्ण नीति होगी।

भारत में इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम सभी अंतर्विरोधों और विरोधाभासों के बावजूद कार्यरत हैं। उनकी संचालन की प्रणाली को लेकर वाद-विवाद चलता रहेगा। यदि वे अपनी

विश्वसनीयता और गुणवत्ता कायम रख सके तो वे चाहे जैसी भी व्यवस्था करें, लोगों को स्वीकार होंगे। इस रूप में प्रासंगिकता बराबर बनी रहेगी।

इकाई-3 भारत में रेडियो

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 रेडियो प्रसारण का शुभारंभ

3.3 भारत में रेडियो प्रसारण का उद्भव

3.3.1 संगठित प्रसारण सेवा

3.3.2 ऑल इंडिया रेडियो

3.3.3 रेडियो की लोकप्रियता

3.4 रेडियो की विकास-यात्रा

3.4.1 नियोजित विकास और रेडियो प्रसारण

3.4.2 आकाशवाणी

3.4.3 नेटवर्क

3.5 आकाशवाणी का कार्यक्षेत्र

3.5.1 समाचार सेवा

3.5.2 विदेश सेवा

3.5.3 विविध भारती एवं विज्ञापन सेवा

3.5.4 युववाणी

3.5.5 राष्ट्रीय चैनल

3.5.6 आकाशवाणी के अन्य कार्यक्रम

3.5.6.1 संगीत, नाटक एवं रूपक

3.5.6.2 स्वास्थ्य और परिवार कल्याण

3.5.6.3 कृषि एवं गृह कार्यक्रम

3.5.6.4 विशेष श्रोता कार्यक्रम

3.5.6.5 खेलकूद

3.5.6.6 चुनाव प्रसारण

3.6 आकाशवाणी की विशिष्ट इकाइयां

3.6.1 संग्रहालय तथा कार्यक्रम विनिमय एकांश

3.6.2 केन्द्रीय अनुश्रवण (मॉनीटरिंग) सेवा

3.6.3 श्रोता संपर्क

3.7 आधुनिक सेवाएं

3.7.1 एफ एम चैनल

3.7.2 फोन-इन सेवा

3.7.3 इंटरनेट

3.8 रेडियो की स्वायत्तता

3.8.1 चन्द्रा समिति

3.8.2 आकाश भारती

3.8.3 प्रसार भारती

3.9 सारांश

3.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.11 निबन्धात्मक प्रश्न

3.0 उद्देश्य

- इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-
- जनसंचार माध्यम के रूप में रेडियो के महत्व को समझ सकेंगे।
- भारत में रेडियो की विकास-यात्रा को जान सकेंगे।
- स्वतंत्रता के पश्चात् रेडियो तंत्र के विस्तार के संबंध में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- आकाशवाणी के विविध कार्य क्षेत्रों तथा उसके वर्तमान नेटवर्क के बारे में जान सकेंगे।
- आकाशवाणी की विभिन्न इकाइयों के कार्यकलापों को समझ सकेंगे।
- आकाशवाणी द्वारा हाल में शुरू की गई नई सेवाओं से अवगत हो सकेंगे।
- आकाशवाणी को स्वायत्तता देने की दिशा में हुए प्रयासों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

20 वीं शताब्दी मानव इतिहास की सबसे अधिक घटनापूर्ण तथा उपलब्धियों से भरी रही है। जितनी भौतिक प्रगति मनुष्य ने गत 100 वर्षो में की है, उतनी संभवत: उसने अपने पिछले समूचे इतिहास में नहीं की। कम्प्यूटर और इंटरनेट का आविष्कार संचार के क्षेत्र की नवीनतम क्रांतिकारी घटना है जिसने समूचे विश्वको एकदम करीब ला दिया है। इसलिए यह भविष्यवाणी सही लग रही है कि 21 वीं शताब्दी सूचना टैक्नॉलोजी को समर्पित होगी। सूचना आज सबसे बड़ी शक्ति बनती जा रही है। सूचना तंत्र मनुष्य की अन्य सभी गतिविधियों पर हावी होता दिखाई दे रहा है। संचार माध्यमों ने भौतिक एवं आर्थिक जीवन ही नहीं, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक अनुभवों को भी दूर तक प्रभावित किया है। उपग्रह संचार ने रेडियो और टेलीविजन की सेवाओं को न केवल विस्तार दिया है बल्कि उनकी गुणवत्ता तथा तकनीकी क्षमता को कई गुना बढ़ा दिया है। भारत में टेलीविजन की शुरुआत बीसवीं शताब्दी के छठे दशक के अंतिम वर्षो में हो गई थी और प्रारंभ में इसकी प्रगति बहुत धीमी रही। किंतु नौवें दशक तक आते-आते टेलीविजन भारत के क्षितिज पर पूरी तरह छा गया और उसने रेडियो को शहरी घरों से विस्थापित करना शुरू कर दिया। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक में टेलीविजन ने एक ओर करवट ली जब आर्थिक उदारीकण के प्रभाव से निजी और

विदेशी चैनलों का भारत में प्रवेश हुआ और सरकारी माध्यम दूरदर्शन का एकाधिकार समाप्त हो गया।

टेलीविजन की चमक इतनी बढ़ गई कि रेडियो उपेक्षित होने लगा और यदि चालू भाषा में कहें तो रेडियो की बोलती बंद होने लगी। किंतु भारतीय संदर्भों में जनसंचार की दृष्टि से रेडियो का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। अशिक्षा और गरीबी के कारण पत्र-पत्रिकाएं अधिकांश भारतवासियों की पहुंच और समझ के बाहर हैं। टेलीविज़न महंगा माध्यम है। किंतु रेडियो हर वर्ग के व्यक्ति तक पहुँच सकता है और आम लोगों की भाषा एवं मुहावरे में प्रस्तुत कार्यक्रमों के माध्यम से जनता के मनोरंजन, शिक्षण और जागरण में सहायक हो सकता है। अपने स्वर्णकाल में रेडियो अपने उद्देश्य में बखूबी सफल रहा और वह कृषि, स्वास्थ्य, खेलों आदि से लेकर राजनीति, साहित्य और संस्कृति का वाहक बना रहा। अंतिम दशक के मध्य में रेडियो ने भी करवट ली जब एफ एम चैनल की शुरुआत से वह पुन: लोकप्रिय होने लगा। 1999 में एफ एम स्टेशनों के निजीकरण के फैसले के बाद आकाशवाणी की लोकप्रियता की अपनी यात्रा की दिशा में दो कदम और आगे बढ़ गया है। इस प्रकार 21वीं शताब्दी में प्रवेश कर आकाशवाणी में नए प्राणों का संचार होने लगा है।

3.2 रेडियो प्रसारण का शुभारंभ

विश्व में रेडियो तरंगों का आविष्कार तो उन्नीसवीं सदी के अंतिम चरण में ही हो चुका था किंतु इन तरंगों के प्रसारण के लिए इस्तेमाल की शुरुआत प्रथम विश्व युद्ध के दौरान 1916 में हुई, जब अमरीका में प्रथम रेडियो स्टेशन ने समाचार प्रसारित किए। 1919 में रेडियो कॉर्पोरेशन ऑफ अमेरिका की वहां संगठित रेडियो तंत्र की नींव पड़ी। उसके तीन वर्ष बाद ब्रिटेन में भी एक प्रसारण कंपनी ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिंग कंपनी की स्थापना हुई जिसने आगे चलकर न केवल रेडियो बल्कि टेलीविजन प्रसारण के क्षेत्र में नए कीर्तिमान कायम किए और आज भी उसकी गिनती विश्व के श्रेष्ठ प्रसारण संगठनों में होती है। 1927 में इसका नाम कंपनी से बदलकर कारपोरेशन हो गया और वह बी.बी.सी. के नाम से विश्व विख्यात हुई। इसके पश्चात् विश्व के अन्य भागों में रेडियो प्रसारण लोकप्रिय होने लगा।

3.3 भारत में रेडियो प्रसारण का उद्भव

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भारत में रेडियो प्रसारण की शुरुआत प्राइवेट कंपनियों द्वारा की गई। पहला रेडियो प्रसारण 31 जुलाई, 1924 को मद्रास रेडियो क्लब के प्रयासों से 40 वाट के ट्रांसमीटर से हुआ। यहां से हल्के-फुल्के मनोरंजन के कार्यक्रम प्रसारित किए जाते रहे। किंतु 1927 में आर्थिक कठिनाइयों के चलते यह सेवा बंद हो गई। 1 अप्रैल, 1931 को मद्रास कॉर्पोरेशन ने फिर से रेडियो सेवा प्रारंभ की जो आगे चलकर 1936 में ऑल इंडिया रेडियो में सम्मिलित हो गई।

3.3.1 संगठित प्रसारण सेवा- भारत में मार्च, 1926 में संगठित रूप से रेडियो प्रसारण शुरू हुआ जब इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी की स्थापना की गई। कंपनी ने 13 सितंबर को सरकार से प्रसारण का लाइसेंस प्राप्त किया। मुम्बई में 23 जुलाई, 1927 को वायसराय

लार्ड इर्विन ने इंडियन ब्राडकास्टिंग कंपनी के पहले केंद्र का उद्घाटन किया। कुछ ही दिन बाद 26 अगस्त, 1927 को कलकत्ता स्टेशन प्रारंभ हो गया। 1927 में रेडियो सुनने का लाइसेंस लेने वालों की संख्या केवल 3594 थी। उन्हीं दिनों लाहौर में वाई एम सी ए के रेडियो क्लब ने एक छोटा ट्रांसमीटर लगा कर प्रसारण सेवा शुरू की।

इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कम्पनी के पास रेडियो सेवा चलाने के लिए संसाधनों का अभाव था। रेडियो लाइसेंसों से प्राप्त होने वाली राशि ही आय का एकमात्र साधन थी। रेडियो सेटों की संख्या में वृद्धि की गति बहुत धीमी थी। 1927 के अंत तक केवल 6000 लाइसेंस जारी हुए। कंपनी ने ब्रिटिश सरकार से अनुदान देने का अनुरोध किया तो सरकार ने कंपनी का काम-काज अपने हाथ में ले लिया और इस प्रकार एक अप्रैल, 1930 को रेडियो प्रसारण सरकार के नियंत्रण में आ गया जो आज तक जारी है। इसका नाम इंडियन ब्राडकास्टिंग सर्विस रखा गया और इसे उद्योग एवं श्रम मंत्रालय के अधीन कर दिया गया। प्रसारण सेवाओं के सुचारू संचालन के उद्देश्य से एक केंद्रीय प्रसारण सलाहकार समिति गठित की गई। किंतु कंपनी का खर्च आय से अधिक बना रहा। आर्थिक मंदी को देखते हुए 10 अक्टूबर, 1931 को सरकार ने प्रसारण सेवाएं बंद कर दीं। किंतु तब तक रेडियो की लोकप्रियता बढ़ने लगी थी और शिक्षित वर्ग ने सरकार के इस फैसले पर गहरा असंतोष अभिव्यक्त किया जिससे प्रभावित होकर उसी वर्ष नवंबर में पुन: प्रसारण सेवाएं चालू हो गईं। इसके साथ ही सरकार ने लाइसेंस शुल्क की राशि बढ़ा दी। 1934 में लाइसेंसों की संख्या 16,000 तक पहुंच गई। अगस्त, 1935 में बी.बी.सी. के एक अनुभवी अधिकारी लायनाल फिल्ड़ेन को कंट्रोलर ऑफ ब्रॉडकॉस्टिंग नियुक्त किया गया। फिल्ड़ेन के आगमन के साथ भारत में प्रसारण सेवाओं के विस्तार एवं सुधार की प्रक्रिया तेज हो गई। उसी दौरान देश की व्यापकता और विविधता को देखते हुए मीडियम वेब ट्रांसमीटर लगाने की योजना बनाई गई। तब तक रेडियो के कार्यक्रमों तथा अन्य गतिविधियों की जानकारी देने के लिए 'इंडियन लिस्नर' तथा 'आवाज' नाम की पत्रिकाओं का प्रकाशन भी शुरू हो चुका था।

सिंतंबर, 1936 में मैसूर रियासत में भी आकाशवाणी नाम से प्रसारण सेवा आरंभ की गई। हालांकि प्रसारण से संबंधित 1935 के कानून में गैर-सरकारी प्रसारण की अनुमति नहीं थी किंतु जनता तथा मैसूर नगर पालिका की सहायता से यह सेवा चलती रही। बाद में 1957 में यही 'आकाशवाणी' नाम भारतीय प्रसारण संगठन के लिए अपना लिया गया।

एक जनवरी, 1936 को दिल्ली स्टेशन ने काम करना शुरू किया। इसके लिए' 20 किलोवाट का ट्रांसमीटर माल रोड पर लगाया गया।

3.3.2 ऑल इंडिया रेडियो- दिल्ली रेडियो स्टेशन खुलने के 5 महीने बाद 1 जून, 1936 को इंडियन ब्रॉडकॉस्टिंग कंपनी का नाम बदलकर ऑल इंडिया रेडियो कर दिया गया। 4 सितम्बर, 1937 को ऑल इंडिया रेडियो के पहले समाचार संपादक चार्ल्स बान्स ने कार्य संभाला और सेंट्रल न्यूज ऑर्गेनाइजेशन की स्थापना की गई। शुरू में अंग्रेजी, हिन्दुस्तानी तथा बंगला में समाचार बुलेटिन प्रसारित हुए।

अगस्त, 1936 में बी.बी.सी. के एक अनुभवी इंजीनियर सिविल गायडर ने ऑल इंडिया रेडियो के चीफ इंजीनियर का पदभार संभाल लिया। फिल्ड़ेन तथा गायडर ने मिलकर ऑल

इंडिया रेडियो का अधिक विस्तार किया। भारत में रेडियो प्रसारण के विकास में इन दो अधिकारियों का ऐतिहासिक योगदान रहा है। उन्होंने 1938 तक आल इंडिया रेडियो नाम को सचमुच सार्थक कर दिखाया और रेडियो प्रसारण की सुविधाएं पूरे देश तक फैल गई। उसी दौरान शार्ट वेव ट्रांसमीटर लगाने का निर्णय किया गया और 10 कि. वाट का पहला शार्टवेव ट्रांसमीटर 4 फरवरी, 1938 को मुम्बई में लगाया गया। 1939 तक दिल्ली और मुम्बई के बीच शार्टवेव के माध्यम से प्रसारण शुरू हो गया। 1 अक्टूबर 1939 से अंग्रेजी तथा हिंन्दुस्तानी और बंगला के अलावा तमिल, तेलगु, गुजराती, मराठी और पश्तो में भी समाचार बुलेटिन प्रसारित होने लगे।

3.3.3 रेडियो की लोकप्रियता- 1941 में ऑल इंडिया रेडियो को सूचना मंत्रालय के अंतर्गत लाया गया तथा 1943 में उसके कार्यालय अपने मौजूदा मुख्यालय ब्राडकॉस्टिंग हाउस में आ गए । इससे पहले द्वितीय विश्व युद्ध के कारण लोगों को नई जानकारी लेने के लिए रेडियो की उपयोगिता महसूस होने लगी । 1938-39 के दौरान रेडियो सेटों की संख्या एक लाख, 40 हजार तक पहुंच गई । इसके बाद आकाशवाणी के विकास एवं विस्तार की अनेक योजनाएं बनीं किंतु 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के कारण ये योजनाएं खटाई में पड़ गई क्योंकि ब्रिटिश शासकों का ध्यान आंदोलन को कुचलने में लग गया । उन्हें यह भी लगने लगा कि अब उनके लिए भारत में अधिक समय तक टिके रहना कठिन है, अत: आकाशवाणी के विस्तार में उनकी रुचि कम हो गई ।

बोध प्रश्न- 1

1. भारत में रेडियो प्रसारण का अधिक महत्व क्यों है?
2. भारत में संगठित रेडियो प्रसारण कब प्रारंभ हुआ और तत्कालीन संगठन का नाम क्या था?
3. द्वितीय विश्वयुद्ध के समय रेडियो लोकप्रिय क्यों हुआ?
4. ऑल इंडिया रेडियो की स्थापना कब हुई? इसके प्रसारण के विकास में किस अधिकारी का विशेष योगदान रहा?

3.4 रेडियो की विकास-यात्रा

15 अगस्त, 1947 को देश की स्वतंत्रता के समय आकाशवाणी यद्यपि बाल्यावस्था में था, किंतु स्वाधीनता के उत्साह एवं उत्सव में उसने महत्वपूर्ण भागीदारी की । 14 अगस्त की रात को सत्ता के हस्तांतरण के विवरण और पंडित जवाहरलाल नेहरू के ऐतिहासिक उद्बोधन 'ए ट्रिस्ट विद दी डेस्टिनी' को रेडियो ने असंख्य लोगों तक पहुंचाया। स्वतंत्रता के समय भारत में कुल 14 रेडियो स्टेशन थे जिनमें से 5 केंद्र देशी रियासतों में तथा 9 ऑल इंडिया रेडियो के केंद्र थे । ऑल इंडिया रेडियो में तब तक समाचार सेवा, विदेश प्रसारण, अनुसंधान विभाग, संगीत विभाग तथा एक से दूसरे स्टेशन तक रिले करने और रिकार्ड करने की प्रणाली जैसी सेवाएं एवं सुविधाएं विकसित हो चुकी थीं । विभाजन के कारण तीन रेडियो स्टेशन-लाहौर, पेशावर और ढाका पाकिस्तान में चले जाने के बाद भारत में केवल 6 केंद्र रह गए । इसके

अलावा देशी रियासतों के सभी 5 स्टेशन मैसूर, बड़ौदा, हैदराबाद, औरंगाबाद और त्रिवेन्द्रम भारत के हिस्से में आए ।

द्वितीय विश्व युद्ध और स्वतंत्रता प्राप्ति के समय रेडियो के महत्वपूर्ण योगदान को देखते हुए भारत की अंतरिम सरकार ने प्रारंभ से ही रेडियो विस्तार को प्राथमिकता दी । स्वतंत्रता प्राप्ति के तीन महीने के भीतर नवंबर में ही जलंधर स्टेशन प्रारंभ हो गया । 1948 में 26 जनवरी से 16 दिसंबर के बीच 5 नए केंद्र खोले गए और,2 रियासतों के केंद्र ऑल इंडिया रेडियो में शामिल किए गए । इस प्रकार 7 नए केंद्र प्रसारण नेटवर्क से जुड़ गए । उसी वर्ष न्यूज़ सर्विसेज़ डिवीजन (समाचार सेवा प्रभाग) तथा एक्सटर्नल सर्विसेज डिवीजन (विदेश सेवा प्रभाग) अलग-अलग काम करने लगे । नए स्टेशन खोलने का सिलसिला इसके बाद भी चलता रहा । 1950 तक रेडियो लाइसेंसो की संख्या साढ़े पांच लाख हो गई ।

3.4.1 नियोजित विकास और रेडियो प्रसारण- नियोजित विकास की पद्धति अपनाने से विकास कार्यो में जनता की भागीदारी बड़ाने के लिए रेडियो का महत्व और बढ़ गया । सामुदायिक विकास का रास्ता चुनने के बाद अनपढ़ जनता को विकास कार्यो के साथ जोड़ने का काम केवल रेडियो के जरिए ही संभव था । इस चुनौती को रेडियो ने बखूबी निभाया । प्रथम पंचवर्षीय योजना में जहां एक ओर नए स्टेशन शुरू करने और ट्रांसमीटर लगाने पर बल दिया, वहीं रेडियो से वार्ता, परिचर्चा जैसे नए कार्यक्रमों के शुभारंभ से आर्थिक प्रगति का संदेश जन-जन तक पहुंचने की दिशा में कदम बढ़ाए गए । ग्रामीण लोगों के लिए विशेष कार्यक्रम प्रसारित किए जाने लगे । लगभग सभी केंद्रों से स्थानीय भाषाओं में आधे-आधे घंटे के ग्रामीण कार्यक्रम प्रसारित करने की परंपरा बन गई, जो आज तक कायम है ।

इस दौरान एक और क्रांतिकारी पहल यह हुई कि गांवों में सामुदायिक रेडियो सेट उपलब्ध कराए गए ताकि जिन लोगों के पास रेडियो सेट नहीं थे'वे किसी एक स्थान पर एकत्र होकर रेडियो सुन सकें ।

3.4.2 आकाशवाणी- भारत के प्रसारण इतिहास में 3 अक्टूबर, 1957 के दिन का विशेष महत्व' है जब ऑल इंडिया ने भारतीय नाम 'आकाशवाणी' अपनाया जैसा कि पहले बताया गया है । यह नाम मैसूर रियासत के रेडियो संगठन से लिया गया जो 'आकाशवाणी' के नाम से कार्यक्रम प्रसारित कर रहा था । इसके बाद अंग्रेजी कार्यक्रमों तथा विदेश प्रसारण में ऑल इंडिया रेडीयो नाम प्रयोग किया जाता रहा था हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओ के स्वदेशी प्रसारणों में 'आकाशमाणी' नाम प्रयोग किया जाने लगा । 'आकाशवाणी' शब्द सरल तथा भारतीय वाड्मय में पहले से प्रचलित होने से कारण बहुत जल्दी लोकप्रिय हो गया ।

3.4.3 नेटवर्क- स्वतंत्रता के समय जिस प्रसारण संगठन के पास केवल 4 केंद्र थे, 1998 के अंत तक उसके केंद्रों की संख्या 195 हो गई। इनमें 183 पूर्ण केंद्र हैं, 9 रिले केंद्र और तीन विविध भारती केंद्र हैं । ट्रांसमीटरों की कुल संख्या 302 है जिनमें से 144 मीडियम वेव, 55 शॉर्टवेव और 103 एफ एम ट्रांसमीटर हैं । आकाशवाणी के कार्यक्रम 97.3 प्रतिशत जनसंख्या तक और 90 प्रतिशत क्षेत्र में पहुंचते हैं ।

बोध प्रश्न-2

1. स्वतंत्रता के समय भारत में कितने रेडियो स्टेशन थे?
2. ऑल इंडिया रेडियो कब आकाशवाणी बना? नया नाम कहाँ से लिया गया?
3. आकाशवाणी के कार्यक्रमों की पहुंच इस समय कितनी आबादी तथा क्षेत्र तक है?
4. आजादी के बाद सरकार ने प्रसारण तंत्र के विस्तार को क्यों प्राथमिकता दी?

3.5 आकाशवाणी का कार्य क्षेत्र

आपने अब तक पढ़ा है कि लगभग 75 साल के अपने इतिहास में भारतीय रेडियो प्रसारण ने न केवल अपने तंत्र में विस्तार किया है बल्कि अपने कार्यक्षेत्र को भी अत्यन्त विविधतापूर्ण और व्यापक बना लिया है । मनोरंजन, सूचना तथा शिक्षा के अपने त्रिमुखी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए समय-समय पर आकाशवाणी नई-नई सेवाओं और कार्यक्रमों का प्रसारण अपने हाथ में लेता रहा है । इन सब प्रयासों से आकाशवाणी का कार्यक्षेत्र अत्यंत व्यापक बन चुका है ।

3.5.1 समाचार सेवा- सच तो यह है कि भारत में रेडियो प्रसारण की शुरुआत ही समाचार प्रसारित करने के उद्देश्य से हुई । पहला समाचार बुलेटिन 23 जुलाई, 1927 को मुम्बई से प्राईवेट रेडियो स्टेशन से प्रसारित हुआ । रेडियो की समाचार शाखा अगस्त, 1927 में अस्तित्व में आई । बाद में समाचार तथा सामयिक विषयों के कार्यक्रमों के निर्माण, समन्वय एवं प्रसारण के लिए समाचार सेवा प्रभाग बनाया गया । शुरू में अंग्रेजी तथा हिन्दुस्तानी में ही समाचार बुलेटिन प्रसारित किए जाते थे किंतु धीरे- धीरे सभी भारतीय भाषाओं, कुछ बोलियों और प्रमुख विदेशी भाषाओं में भी समाचार प्रसारित होने लगे । इस समय (1999) समाचार सेवा प्रभाग 29 घंटे और 29 मिनट की अवधि के कुल 314 समाचार बुलेटिन प्रति दिन प्रसारित कर रहा है । इनमें विदेश सेवा के अंतर्गत 24 भाषाओं में 8 घंटे, 59 मिनट अवधि के 65 बुलेटिन शामिल हैं । स्वदेशी श्रोताओं के लिए हर घंटे समाचार बुलेटिन के अलावा एफ एम चैनल पर भी 24 संक्षिप्त समाचार बुलेटिन प्रसारित किए जाते हैं । 42 क्षेत्रीय समाचार इकाइयों के द्वारा प्रतिदिन 135 बुलेटिन प्रसारित किए जाते हैं ।

इनके अलावा समाचार-आधारित अनेक कार्यक्रम, वार्ताएं, परिचर्चाएं एवं समीक्षाएं भी प्रसारित, होती हैं । समाचार एकत्र करने के लिए देश भर में आकाशवाणी के 90 नियमित तथा 246 अंशकालिक संवाददाता नियुक्त हैं । सात संवाददाता विदेशों में रखे गये हैं । आकाशवाणी के प्राइमरी चैनल पर चौबीसों घंटे समाचार उपलब्ध हैं ।

3.5.2 विदेश सेवा- विदेश सेवा प्रभाग विदेशों में भारत की छवि सुधारने तथा वहां उसे भारतीयों को देश से जोड़े रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । इसकी शुरुआत दूसरे विश्व युद्ध से ही हो गई थी और तब यह समाचार सेवा प्रभाग का हिस्सा था । 1948 में इसे समाचार सेवा प्रभाग से अलग कर दिया गया और इसे नया स्वरूप प्रदान किया गया । किंतु इसके लिए समाचार बुलेटिन तैयार करने का दायित्व आज तक समाचार सेवा विभाग निभा रहा है । विदेश सेवा प्रभाग से 25 भाषाओं में लगभग 70 घंटे की अवधि के कार्यक्रम प्रसारित किए

जाते हैं । इन कार्यक्रमों के जरिए विदेशी श्रोताओं को भारतीय जन-जीवन के विभिन्न पहलुओं की जानकारी दी जाती है और विश्व घटनाओं पर भारत का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जाता है ।

प्रभाग अंग्रेजी में 'इंडिया कॉलिंग' नाम की पत्रिका भी निकालता है जिस में इस सेवा के कार्यक्रमों की विस्तृत सूचना प्रकाशित की जाती है ।

3.5.3 विविध भारती एवं विज्ञापन सेवा- देशभर में मनोरंजन प्रधान हिंदी कार्यक्रम उपलब्ध' कराने के उद्देश्य से द्वितीय योजना में विविध भारती सेवा प्रारंभ की गई । इसमें मुख्यतया फिल्मी गीत तथा अन्य तरह के हल्के-फुल्के प्रोग्राम प्रस्तुत किए जाते हैं । श्रोताओं की भागीदारी के कारण यह सेवा अत्यंत लोकप्रिय है । इस चैनल पर मुख्य राष्ट्रीय समाचार बुलेटिन भी प्रसारित होते हैं । हिंदी के प्रसार में विविध भारती सेवा का काफी योगदान रहा है ।

आकाशवाणी की वित्तीय स्थिति सुदृढ बनाने के लिए 1 नवंबर, 1967 से विज्ञापन सेवा प्रारंभ की गई । इस समय प्राइमरी चैनल के 99 केंद्रों, 30 विविधभारतीय केंद्रों, 74 स्थानीय केंद्रों तथा 4 एफ एम स्टीरियो चैनलों से विज्ञापन प्रसारित किए जा रहे हैं । विविध भारती सेवा 30 केंद्रों के अलावा मुम्बई, दिल्ली, चेन्नई और गुवाहाटी के शार्टवेव ट्रांसमीटरों से 14 घंटे से अधिक समय के मनोरंजन प्रधान कार्यक्रम प्रस्तुत करती है । 1997-98 में आकाशवाणी ने 93.44 करोड़ रुपये का राजस्व अर्जित किया ।

3.5.4 युववाणी- देश के युवाओं में चेतना लाने तथा उन्हें राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़े रखने के विचार से 23 जुलाई, 1969 को आकाशवाणी के दिल्ली केंद्र से एक नई सेवा युववाणी यानी युवाओं की आवाज शुरू की गई । इसके लिए अलग चैनल दिल्ली 'डी' की स्थापना की गई । बाद में यह सेवा कई अन्य केंद्रों से भी प्रसारित की जाने लगी । इस चैनल की विशेषता यह है कि इसमें जहां तक संभव हो, केवल युवक-युवतियों द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रम ही प्रसारित किए जाते हैं । इनमें अधिक संख्या कॉलेजों व विश्वविद्यालयों के छात्र-छात्राओं की होती है । इस चैनल से भारतीय व पश्चिमी संगीत के अलावा समसामयिक विषयों पर चर्चाएं तथा अन्य युवकोचित कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाते हैं । एफ एम चैनल शुरू होने के बाद युववाणी की चमक कुछ कम हो गई है ।

3.5.5 राष्ट्रीय चैनल- देश भर में एक साथ ही चैनल से प्रसारण उपलब्ध कराना राष्ट्रीय चैनल का मुख्य उद्देश्य है । यह चैनल 1988 में शुरू हुआ । यह सेवा केवल रात्रि के समय यानि शाम 6.50 बजे से सुबह 6.10 के बीच देश के 64 प्रतिशत क्षेत्र और लगभग 76 प्रतिशत जनसंख्या के लिए उपलब्ध है । इसके कार्यक्रमों में ज्ञान तथा मनोरंजन का संतुलन रहता है । इन कार्यक्रमों में सांस्कृतिक विविधता तथा भारतीय जीवन मूल्यों को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया जाता है । इस चैनल पर बारी-बारी से हिंदी और अंग्रेजी में समाचार भी प्रसारित किए जाते हैं । इस चैनल पर साहित्यिक कार्यक्रमों को भी पर्याप्त महत्व दिया जाता है।

3.5.6 अन्य कार्यक्रम- आकाशवाणी के प्राथमिक चैनल तथा क्षेत्रीय एवं स्थानीय केन्द्रों से आम जनता तथा विशिष्ट श्रोतावर्गो की रुचि के अन्य अनेक कार्यक्रम भी प्रसारित किए जाते हैं । ये सभी कार्यक्रम आकाशवाणी को व्यापकता और संपूर्णता प्रदान करते हैं ।

इनमें से कुछ कार्यक्रम स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करते हैं तो कुछ कार्यक्रमों के जरिए श्रोताओं का दृष्टिकोण व्यापक बनाने और उनमें जागरूकता पैदा करने का प्रयास किया जाता है ।

3.5.6.1. संगीत, नाटक एवं रूपक- आकाशवाणी के प्रारंभिक दौर में संगीत को विशेष महत्व नहीं दिया गया किंतु स्वतंत्रता के बाद, विशेषकर वी.वी. केसकर के सूचना एवं प्रसारण मंत्री बनने के बाद भारतीय शास्त्रीय और सुगम संगीत को महत्वपूर्ण स्थान मिलने लगा । सच तो यह है कि शास्त्रीय संगीत को पुनर्जीवित करने तथा उसे लोकप्रियता व प्रतिष्ठा दिलाने में रेडियो की उल्लेखनीय भूमिका रही है ।

सप्ताह में दो बार संगीत के अखिल भारतीय कार्यक्रम प्रसारित किए जाते है । एक-एक घंटे के ये कार्यक्रम सभी प्रमुख केंद्रों से रिले किए जाते हैं । इसके अलावा आकाशवाणी आमंत्रित श्रोताओं की उपस्थिति में वार्षिक रेडियो संगीत सम्मेलन आयोजित करता है जिनमें चोटी के संगीतकार गायन तथा वाद्य संगीत प्रस्तुत करते हैं । इन कार्यक्रमों की रिकार्डिंग देश भर में प्रसारित की जाती है । आकाशवाणी के कुल प्रसारण समय में से 40 प्रतिशत समय में शास्त्रीय, सुगम, लोक तथा फिल्म संगीत तथा क्षेत्रीय भाषाओं का संगीत प्रसारित किया जाता है।

संगीत की भांति नाटकों तथा रूपकों के भी अखिल भारतीय कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाते हैं । आकाशवाणी के 80 से भी अधिक केंद्र विभिन्न भाषाओं में नाटक प्रसारित करते हैं । 10 भाषाओं में अखिल भारतीय नाटक लेखन प्रतियोगिता आयोजित की जाती है । सभी पुरस्कृत नाटकों का हिंदी अनुवाद करा कर उन्हें अन्य केंद्रों को क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद के लिए भेजा जाता है । इन सभी रूपांतरों का संबंधित केंद्रों से प्रसारण किया जाता है । हर महीने के चौथे बृहस्पतिवार को रूपकों का अखिल भारतीय कार्यक्रम प्रसारित होता है । इसमें क्षेत्रीय भाषाओं में सम्बद्ध केंद्रों द्वारा रूपकों का प्रसारण होता है ।

3.5.6.2 स्वास्थ्य और परिवार कल्याण- जैसा कि पहले आप जान चुके हैं कि विकास तथा जनकल्याण के कार्यक्रमों की जानकारी आम लोगों तक पहुंचाने में रेडियो ने उपयोगी भूमिका निभाई है । छोटे परिवार का संदेश लोकप्रिय बनाने के लिए आकाशवाणी से देश की सभी भाषाओं और बोलियों में परिवार कल्याण कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं । 22 केंद्रों में परिवार कल्याण के विशेष एकांश काम कर रहे हैं । इन विषयों पर हर महीने 11,000 मिनट से अधिक अवधि के 8500 कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाते हैं । प्रत्येक केंद्र से सप्ताह से एक बार 15 मिनट का कार्यक्रम स्वास्थ्य मंच प्रसारित किया जाता है । इन कार्यक्रमों में शिक्षा, कल्याण तथा आत्रशोध, पेचिश और पोलियो जैसे रोगों के इलाज व रोकथाम से संबंधित जानकारी दी जाती है । डॉक्टरों तथा विभिन्न विकारों से पीड़ित व्यक्तियों से भेंटवार्ता पर आधारित कार्यक्रम काफी असरदार सिद्ध हुए हैं । एड्स जैसी घातक बीमारियों के बारे में धारावाहिक कार्यक्रम भी प्रसारित किए जाते हैं ।

3.5.6.3 कृषि एवं गृह कार्यक्रम- कृषि तथा उससे संबंधित व्यवसायों की नवीनतम जानकारी ग्रामीण जनता तक पहुंचाने के लिए आकाशवाणी के लगभग सभी केंद्रों में 'फार्म एंड होम' कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं । इसके लिए हर केंद्र में कृषि एवं गृह एकांश स्थापित

किए गए हैं । प्रत्येक केंद्र में प्रसारित 60 से 100 मिनट की अवधि के इन कार्यक्रमों में कृषि की नई तकनीकों पर सूचना देने के साथ-साथ पर्यावरण, सामाजिक वानिकी, सिंचाई, गरीबी उन्मूलन परियोजनाओं, स्वास्थ्य, स्वच्छता, साक्षरता जैसे विषयों पर भी प्रकाश डाला जाता है । इन कार्यक्रमों में ग्रामीण विकास, पंचायती राज की भूमिका तथा गांवों की महिलाओं की दशा सुधारने पर भी जोर दिया जाता है । कार्यक्रमों को रोचक बनाने के लिए इनमें गीत-संगीत और हास्य-व्यंग्य का पुट भी रहता है ।

3.5.6.4 विशेष श्रोता कार्यक्रम- आकाशवाणी विशेष श्रोता वर्गों के लिए भी कार्यक्रम प्रसारित करता है जिनमें इन वर्गों की रुचि तथा आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है । इनमें महिलाएँ, श्रमिक, किसान, बच्चे आदि वर्ग शामिल हैं । महिलाओं के लिए दिन के समय कार्यक्रम दिए जाते हैं क्योंकि उस समय गृहणियां घर के काम-काज से मुक्त हो जाती हैं । इन कार्यक्रमों में महिला श्रोताओं की खुद की भागीदारी पर ज्यादा जोर दिया जाता है । ऐसे कार्यक्रमों में व्यंजन बनाने से लेकर महिला समस्या पर गंभीर परिचर्चा जैसी विधाएं सम्मिलित रहती हैं ।

इसी प्रकार श्रमिकों के लिए प्रस्तुत कार्यक्रमों में औद्योगिक कानूनों, न्यूनतम वेतन तथा सुरक्षा जैसे पहलुओं की चर्चा रहती है । किसानों, बच्चों तथा अन्य वर्गों के लिए भी इसी प्रकार के कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं । श्रोताओं की भागीदारी इन कार्यक्रमों की मुख्य विशेषता है ।

3.5.6.5 खेलकूद- खेल प्रतियोगिताओं को लोकप्रिय बनाने में रेडियो-टेलीविजन का बहुत बड़ा हाथ है । आकाशवाणी से विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय खेल प्रतियोगिताओं का आंखों-देखा हाल सुनाने के अलावा खेलों पर अन्य कार्यक्रम भी प्रसारित किये जाते हैं । एक खेल समाचार बुलेटिन भी प्रसारित किया जाता है । युववाणी पर खेल कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी जाती है । समय-समय पर खिलाड़ियों की भेंटवाताएं भी प्रसारित की जाती हैं जिससे नई पीढ़ी उनके प्रेरणा ग्रहण करके खेलकूद के क्षेत्र में आगे बढ़ सकें । जिन प्रतियोगिताओं का आंखों देखा हाल प्रसारित करना सम्भव नहीं होता, उनकी रेडियो रिपोर्ट प्रसारित की जाती है ।

3.5.6.6 चुनाव प्रसारण- लोकतंत्र में लोकसभा तथा विधानसभा चुनावों का आधारभूत स्थान है । जून, 1977 से विभिन्न राजनीतिक दलों को चुनावों के दौरान देश के लोगों के सामने अपनी बात रखने का अवसर देने के लिए चुनाव प्रसारण योजना प्रारंभ की गई । चुनाव प्रसारण चुनाव आयोग की देखरेख में होता है । लोकसभा चुनाव के लिए राष्ट्रीय स्तर पर और विधानसभा चुनावों के लिए संबंधित क्षेत्रीय केंद्र से चुनाव प्रसारण की व्यवस्था है । प्रसारण की अवधि तथा तिथियों का निर्धारण चुनाव आयोग द्वारा किया जाता है । इसके अलावा विशेष अवसरों पर राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री राष्ट्रीय स्तर पर और राज्यपाल व मुख्यमंत्री क्षेत्रीय केंद्रों से अपना संदेश प्रसारित कर सकते हैं ।

बोध प्रश्न-3

1. आकाशवाणी की विविध भारती सेवा का स्वरूप क्या है?
2. राष्ट्रीय चैनल कब और क्यों शुरू हुआ?

3. आकाशवाणी के 5 प्रमुख कार्यक्रमों के नाम बताइए?

4. आकाशवाणी की समाचार सेवा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।

3.6 आकाशवाणी की विशिष्ट इकाइयाँ

नियमित प्रसारण को सुचारू बनाने तथा कार्यक्रम तैयार करने में सहायता के लिए आकाशवाणीमे अनेक इकाइयाँ काम कर रही हैं । इन इकाइयों के समर्थन एवं सहयोग के बिना प्रसारण कार्य संभव नही नहीं है । ये इकाइयां प्रसारण तंत्र के उपयोगी अंग के रूप में काम करते हुए कार्यक्रमों की गुणवत्ता स्तर सुधारने में भी सहायक होती हैं ।

.3.6.1 संग्रहालय तथा कार्यक्रम विनिमय एकांश- आकाशवाणी का संग्रहालय प्रत्यंकन एवं कार्यक्रम विनिमय सेवा का मुख्य एकांश है । इसमें अलग-अलग कार्यक्रमों के लगभग 47,000 टेप हैं जिनमें शास्त्रीय, सुगम एवं लोक संगीत की 12,000 रिकार्डिंग शामिल हैं । यहां महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस तथा अन्य महापुरुषों की आवाज की रिकार्डिंग भी उपलब्ध है । देश के राष्ट्रपतियों तथा प्रधानमंत्रियों के भाषणों के टेप भी संगृहीत किए जाते हैं ।

कार्यक्रम विनिमय एकांश संग्रहालय में मौजूद कार्यक्रमों का आदान-प्रदान करता है । विदेशों से कार्यक्रम मंगवाने तथा उन्हें अपने कार्यक्रमों की रिकार्डिंग भेजने के काम में समन्वय करना भी इसी एकांश का दायित्व है । देश के अन्य केन्द्रों को टेप भेजने का काम भी यही एकांश देखता है।

3.6.2 केन्द्रीय अनुश्रवण (मॉनीटरिंग) सेवा- केन्द्रीय अनुश्रवण सेवा विदेशी रेडियो तथा टेलीविजन प्रसारणों के समाचारों और समाचार आधारित कार्यक्रमों को मॉनीटर करती है । इसका मुख्यालय पहले शिमला में था जो 1981 में दिल्ली आ गया । प्रतिदिन औसतन 15 रेडियो और तीन टेलीविजन चैनलों के लगभग 130 प्रसारणों का अनुश्रवण किया जाता है । ये प्रसारण 8 भाषाओं में हैं । भारत के प्रति दुष्प्रचार, विशेषकर पाकिस्तानी संचार माध्यमों द्वारा किए जाने वाले दुष्प्रचार की विशेष दैनिक तथा साप्ताहिक रिपोर्ट तैयार की जाती है । इन रिपोर्टों को सरकार के अनेक महत्वपूर्ण विभागों और गुप्तचर एजेंसियों को भेजा जाता है जिससे उनके जवाब में प्रोपेगंडा करने की उपयुक्त रणनीति तैयार करने में मदद मिलती है । इस सेवा के दो क्षेत्रीय एकांश जम्मू तथा कलकत्ता (कोलकाता) में हैं ।

3.6.3 श्रोता संपर्क- श्रोता अनुसंधान एकांश सर्वेक्षणों तथा अध्ययनों के आधार पर आकाशवाणी के विभिन्न कार्यक्रमों के संबंध में श्रोताओं की प्रतिक्रिया प्राप्त करता है और कार्यक्रमों को बेहतर बनाने के दिशा-निर्देश तैयार करता है । दूरदर्शन के कार्यक्रमों की रेटिंग भी इसी एकांश द्वारा तय की जाती है । इन सर्वेक्षणों से विभिन्न कार्यक्रमों की लोकप्रियता का पता चलता है जिससे उनके प्रसारण समय पर विज्ञापनों की दरें तय करने में भी सहायता मिलती है ।

आकाशवाणी राजेन्द्र प्रसाद व्याख्यानमाला तथा सरदार पटेल व्याख्यानमाला के अंतर्गत हर साल व्याख्यान का आयोजन करती है जिसमें विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों के भाषण आमंत्रित श्रोताओं के सम्मुख कराए जाते हैं । गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर पूर्वभाषा कवि सम्मेलन आयोजित कराया जाता है । इन सभी कार्यक्रमों को आकाशवाणी आम लोगों से प्रत्यक्ष

संपर्क करता है । आकाशवाणी विभिन्न कार्यक्रमों में श्रेष्ठता का प्रदर्शन करने वाले कलाकारो / कर्मचारियो को वार्षिक पुरस्कार भी प्रदान करता है ।

3.7 आधुनिक सेवाएं

आकाशवाणी ने सूचना टेक्नॉलोजी में तेजी से आ रही क्रांति तथा उपग्रह संचार से प्राप्त सुविधाओं का लाभ उठाते हुए न केवल अपने प्रसारण की गुणवत्ता में सुधार करने के कदम उठाए हैं बल्कि अनेक नई प्रसारण सेवाएं भी आरंभ की हैं । इन सेवाओं से नई पीढ़ी फिर से आकाशवाणी की ओर आकर्षित हो रही है ।

3.7.1 एफ. एम. चैनल- एफ.एम. यानी फ्रीक्वेंसी मॉड्यूल प्रसारण की बेहतर तकनीक है, जिसमें ध्वनि का प्रेषण अधिक स्पष्ट होता है । यह सेवा प्रारंभ में निजी कार्यक्रम निर्माताओं के माध्यम से शुरू की गई और बहुत जल्दी ही युवक युवतियों में लोकप्रिय हो गई । यह चैनल मनोरंजन प्रधान है तथा श्रोताओं की भागीदारी के कारण इसके कार्यक्रम बहुत पसंद किए जाते हैं । टेलीविजन के आगमन के कारण शहरों में आकाशवाणी की खोई हुई लोकप्रियता तो कुछ हद तक बहाल करने में एफ एम चैनल का हाथ रहा है । इस समय इक्के 103 ट्रांसमीटर काम कर रहे हैं । 1998 में निजी निर्माताओं से करार समाप्त होने के बाद आकाशवाणी विभागीय तौर पर इसके कार्यक्रम प्रसारित कर रहा है । अब सरकार ने कुछ और नगरों में एफ एम सेवा शुरू करने की घोषणा की है और ये केंद्र निजी कंपनियों द्वारा संचालित किए जायेंगे । यह भारत में रेडियो के निजीकरण की दिशा में उल्लेखनीय कदम है ।

3.7.2 फोन-इन सेवा- आकाशवाणी पर फोन से समाचार सुनने की सुविधा उपलब्ध करा दी गई है । निर्धारित टेलीफोन नंबर डायल करने पर आप उस समय तक के मुख्य समाचार सुन सकते हैं । ये समाचार हिंदी और अंग्रेजी में उपलब्ध हैं ।

एक अन्य प्रणाली के अंतर्गत श्रोता अपनी पसंद का संगीत भी फोन पर सुन सकते हैं । लोकप्रिय गीत, संगीत एक कम्प्यूटर ऑडियो सर्वर में संग्रहित रहता है जो टेलीफोन से विभाग के इंटरफेस से जुड़ा रहता है ।

3.7.3 इंटरनेट- 1 मई, 1998 से आकाशवाणी की सेवाएं चौबीसों घंटे इंटरनेट पर उपलब्ध हो गई हैं । इस सेवा के चालू हो जाने से विश्व के सभी देशों में आकाशवाणी कार्यक्रम प्राप्त किए जा सकते हैं । विदेश सेवा के सिग्नल ठीक से न मिल पाने से सुदूरवर्ती देशों में रहने वाले बहुत से भारतीय आकाशवाणी के कार्यक्रम सही ढंग से नहीं सुन पाते थे । इंटरनेट सेवा से उनकी यह कठिनाई दूर हो गई है ।

3.8 रेडियो की स्वायत्तता

भारत में रेडियो प्रसारण की शुरुआत भले ही निजी कंपनियों ने की हो, किंतु संगठित रेडियो प्रसारण अपने उदयकाल से ही सरकार के नियंत्रण में रहा है । हां, समय-समय पर उसे स्वायत्तता प्रदान करने की मांग तथा प्रयास अवश्य होते रहे हैं । आज भी विडम्बना यह है कि आकाशवाणी और दूरदर्शन को स्वायत्तता देने के लिए बनाया गया प्रसार भारती कानून लागू होने के बाद भी इन दोनों संगठनों की स्वायत्तता अधर में लटकी हुई है और प्रसार भारती निगम आधे-अधूरे ढंग से ही काम कर रहा है ।

3.8.1 चंद्रा समिति- स्वायत्तता की दिशा में पहला प्रयास 1964 में हुआ जब अशोक़ के. चंद्रा' की अध्यक्षक में एक समिति गठित की गई । समिति ने 18 अप्रैल, 1966 को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में रेडियो और टेलीविजन को अलग-अलग संगठन बनाने तथा आकाशवाणी को स्वायत्तता देने के उद्देश्य से 219 सिफारिशें कीं । समिति की मुख्य सिफारिश यह थी कि आर्थिक तथा प्रशासनिक दृष्टि से इन संगठनों पर सरकार का अधिकार बना रह सकता है किंतु रोजमर्रा के काम में सरकारी हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए । समिति की स्वायत्तता देने की सिफारिशें तो अनदेखी रह गई किंतु 1976 में इन्हें दो अलग महानिदेशालयों में विभक्त कर दिया गया ।

3.8.2 आकाश भारती- आपात्काल में जनसंचार माध्यमों के दुरुपयोग के विरुद्ध व्यापक जन आक्रोश को देखते हुए 1977 में बनी जनता सरकार ने रेडियो और टेलीविजन को स्वायत्त बनाने का संकल्प प्रकट किया । 1977 में सरकार ने बी.जी. वर्गीस की अध्यक्षता में कार्यदल गठित किया जिसने 24 फरवरी, 1978 को अपनी रिपोर्ट पेश की । इस रिपोर्ट के आधार पर 12 मार्च, 1978 को 'आकाश भारती' विधेयक पेश किया गया किंतु वह पारित न हो सका । इसे संशोधित करके मई, 1979 में 'प्रसार भारती' नाम से नया विधेयक लाया गया, किंतु जनता सरकार के गिर जाने के कारण यह विधेयक भी समाप्त हो गया ।

28 नवम्बर, 1980 को 14सदस्यों की जी.पार्थसारथी समिति बनाई गई जिसने दोनों संगठनों के काम-काज में निष्पक्षता लाने और कर्मचारियों के हितों की रक्षा से संबंधित कई सुझाव दिए ।

3.8.3 प्रसार भारती- 1989 में जनता दल के नेतृत्व में मिली-जुली सरकार ने दुबारा प्रसार भारती विधेयक पेश किया जो विपक्ष के अनेक सुझावों को शामिल करने के बाद 1990 में पारित कर दिया गया, किंतु जनता दल सरकार के गिर जाने के कारण वह लागू नहीं हो सका । अगले पांच वर्षो तक कांग्रेस सरकार ने इस विधेयक को लागू करने की अधिसूचना जारी नहीं की । 1997 में राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार ने 23 नवंबर को स्वायत्त प्रसार भारती निगम की स्थापना की और वरिष्ठ पत्रकार निखिल चक्रवर्ती की अध्यक्षता में बोर्ड गठित किया । सरकार ने पुराने कानून में कुछ संशोधन करने के लिए अध्यादेश जारी किया । किंतु गठबंधन सरकार के गिर जाने से वह अध्यादेश समाप्त हो गया और भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में बनी गठबंधन सरकार ने इससे पहले के कानून को बहाल करने के उद्देश्य से नया अध्यादेश जारी किया किंतु उसके स्थान पर विधेयक पारित नहीं करा सकी । इस प्रकार स्थिति अस्पष्ट बनी हुई है और स्वायत्त निगम बन जाने के बावजूद दोनों माध्यमों पर सरकार का पूरा नियंत्रण है तथा निगम को सक्रिय और अधिकार संपन्न बनाने की दिशा में कोई कार्यवाही नहीं की गई ।

वास्तविक रूप से कहा जा सकता है कि 'प्रसार भारती' का स्वरूप अभी स्पष्ट रूप से सामने नहीं आ सका है । अत : यह अनुमान लगाना कठिन है कि भविष्य में दूरदर्शन और आकाशवाणी की क्या रूपरेखा होगी?

बोध प्रश्न-4

1. आकाशवाणी के कुछ प्रमुख विभागों के नाम गिनाइए ।

2. एफ एम चैनल की लोकप्रियता के क्या कारण हैं?
3. चंद्रा समिति कब गठित की गई और उसकी मुख्य सिफारिशें क्या थीं?
4. प्रसार भारती निगम कहां तक स्वायत्त है?

3.9 सारांश

इस इकाई में हमने पढ़ा कि भारत में रेडियो प्रसारण का महत्वपूर्ण स्थान है हमने यह भी जाना कि हमारे देश में रेडियो प्रसारण का प्रादुर्भाव निजी कंपनियों के प्रयासों से बहुत छोटे स्तर पर हुआ और स्वतंत्रता के समय तक इसका विकास बहुत धीमा था स्वतंत्रता के बाद रेडियो तंत्र का तेजी से विस्तार हुआ और विभिन्न प्रकार के ज्ञानवर्धक, मनोरंजक तथा प्रेरक कार्यक्रमों का प्रसारण शुरू किया गया । आकाशवाणी को स्वायत्त बनाने के प्रयास समय-समय पर किए गए हैं किंतु आज भी यह व्यावहारिक दृष्टि से सरकार के नियंत्रण में है।

3.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. दिस इज ऑल रेडियो, यू.एल. बरुआ, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली
2. इंडियन ब्रॉडकास्टिंग, एच.आर. लूथरा, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली
3. ब्राडकास्टिंग एण्ड पीपल, मेहरा मसानी नेशनल बुक ट्रस्ट
4. ब्रॉडकास्टिंग इन इंडिया, जी.सी अवस्थी, एलाइड पब्लिकेशन
5. आकाशवाणी, राम बिहारी विश्वकर्मा, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली

3.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्वतंत्रता से पूर्व आकाशवाणी के विकास का विवेचन कीजिए ।
2. टेलीविजन की लोकप्रियता के बावजूद भारत में रेडियो का महत्व कम नहीं हुआ, इस विचार से आप कहां तक सहमत हैं? विस्तार से लिखिए ।
3. आकाशवाणी के कार्यक्षेत्र का ब्यौरा दीजिए ।
4. 'भारत में रेडियो यदि सरकारी नियंत्रण से मुक्त होता तो उसका अधिक विकास हो सकता था', इस कथन का विश्लेषण कीजिए ।
5. आकाशवाणी की नई सेवाओं का परिचय देते हुए रेडियो प्रसारण की भावी संभावनाओं का आकलन कीजिए ।
6. 'प्रसार भारती' पर एक आलोचनात्मक लेख लिखिए ।

इकाई 4 भारत में सिनेमा (भाग-1)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.3 भारत में सिनेमा का आगमन

4.3 भारत में फिल्मांकन के प्रयास

4.4 पहला भारतीय कथाचित्र और दादा साहब फालके

4.5 मूक सिनेमा का दौर

4.6 मूक फिल्में और सैंसरशिप

4.7 सिनेमा में ध्वनि का आगमन

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.9 निबंधात्मक प्रश्न

4.0 उद्देश्य

विश्व सिनेमा आज सौ वर्ष पूरे कर चुका है और अब दुनिया भर में सिनेमा को एक बेहद लोकप्रिय और जादुई कला का दर्जा प्राप्त है । ऐसे में यह जानना और भी दिलचस्प है कि इस महान कला की शुरुआत कब और किन हालात में हुई । इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थियों को सिनेमा के क्रमिक विकास को समझने में सुविधा रहेगी । विकास क्रम को भारतीय सिनेमा के संदर्भ में ही केन्द्रित रखा गया है ।

4.1 प्रस्तावना

बीसवीं शताब्दी के सबसे बड़े चमत्कार सिनेमा का इतिहास सौ साल से भी अधिक पुराना है । आधुनिक कलाओं की जन्मभूमि फ्रांस में ही सर्वप्रथम कैमरे का आविष्कार हुआ । यह बात 1839 की है जब लुई दुगारे नामक एक उत्साही नौजवान ने पहले-पहल स्थिर चित्रों का छायांकन करने वाला कैमरा बनाया था । स्थिर चित्रों के बाद चलते-फिरते चित्रों का छायांकन करने वाले मूवी कैमरा, जिसे तब सिनेटोस्कोप कहा जाता था, का निर्माण भी फ्रांस में ही किया गया था । 1894 में फ्रांस के लुमिएर बंधुओं (लुई लुमिएर और ऑगस्त लुमिएर) ने सर्वप्रथम ऐसा सिनेटोस्कोप बनाया था, जो चलते-फिरते चित्रों के दृश्य खींच सकता था और उन्हें उसी अवस्था में प्रदर्शित भी कर सकता था । यह थी सिनेमा की शुरुआत । 28 दिसम्बर, 1895 को पेरिस के एक होटल में लुमिएर बंधुओं द्वारा निर्मित लघु फिल्मों का प्रदर्शन किया गया और इस काम में एक तीसरे व्यक्ति जॉर्ज मेलिए ने भी उनका साथ दिया । लगभग इसी समय इंग्लैण्ड और अमेरिका में भी सिनेटोस्कोप का इस्तेमाल शुरू हो गया था ।

दिसम्बर 1895 में प्रथम प्रदर्शन से पूर्व लुमिएर बंधु पचास से अधिक लघु फिल्में निर्मित कर चुके थे और इस तरह 1895 से 1905 तक उन्होंने विश्व सिनेमा बाजार में अपना आधिपत्य

कायम रखा । इस अवधि में उन्होंने भारत समेत दुनिया के सभी प्रमुख देशों में अपने चमत्कार का प्रदर्शन किया ।

4.2 भारत में सिनेमा का आगमन

सिनेमाई भाषा में कहें तो यहाँ से हम फ्लैश-बैक शुरू करते हैं..... । सात जुलाई 1896....... मुम्बई की वॉटसन होटल में कुछ चुनींदा लोगों के सम्मुख लुमिएर बंधुओं की फिल्मों का प्रदर्शन किया गया । लुमिएर बंधुओं के इस चमत्कार को तत्काल कामयाबी मिली और टिकट दर एक रुपया होने के बावजूद बड़ी तादाद में दर्शक बायस्कोप देखने के लिए जुटे । इस कामयाबी के बाद इन फिल्मों का प्रदर्शन नॉवल्टी थिएटर में होने लगा । इस तरह हम देखते हैं कि भारतीय सिनेमा का सफर भी विश्व सिनेमा के लगभग साथ-साथ ही शुरू हो गया था । लुमिएर बंधुओं ने अपना पहला प्रदर्शन पेरिस में दिसम्बर, 1895 में किया था और छह महीने की अवधि में ही भारतीय दर्शकों को भी फिल्म देखने का मौका मिल गया । शेष विश्व की भांति भारतीय दर्शकों ने भी सिनेमा का दिल खोलकर स्वागत किया । वॉटसन होटल में आयोजित प्रथम प्रदर्शन देखने के बाद टाइम्स ऑफ इण्डिया ने लिखा- "एक शक्तिशाली लालटेन की मदद से वास्तविक जीवन से मिलते- जुलते बहुत से दृश्य पर्दे पर दिखाए गए । जिस प्रकार प्रत्येक पात्र की भाव- भंगिमाएँ अत्यन्त स्पष्टता से प्रस्तुत की जा सकीं, उससे पता चलता है कि छायांकन की कला और जादुई लालटेन का गठजोड़ किस उन्नत स्थिति तक पहुँच चुका है। एक मिनट में लगभग सात सौ से आठ सौ तक छायाचित्र पर्दे पर प्रकाशमान हो उठते हैं । इन दृश्यों को दर्शकों ने बेहद पसंद किया । कहने का आशय यह है कि विज्ञान के इस नए आविष्कार को देखकर दर्शक अभिभूत हो गए।"

सन् 1902 के आसपास कलकत्ता में जमशेदजी फ्रामजी मदन तथा मुंबई में अब्दुल अली युसुफ अली ने भी इन फिल्मों का प्रदर्शन शुरू कर दिया था । जाहिर है कि ज्यादातर स्थानों पर विदेशी में बनी फिल्में ही प्रदर्शित की जा रही थीं । यहाँ यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि हमारे देश में फिल्म बनाने के प्रयास कब शुरू हुए ।

4.3 भारत में फिल्मांकन के प्रयास

कलकत्ता में हीरालाल सेन और मुम्बई में हरिश्चन्द्र सखाराम भाटवडेकर उर्फ सावे दादा-ये दो शख्स ऐसे थे जिन्होंने सर्वप्रथम चलचित्र तकनीक का प्रयोग किया था । सावे दादा मुम्बई में अपना फिल्म स्टूडियो चलाते थे । बंबई में जब लुमिएर बंधुओं की फिल्मों का प्रदर्शन-होने लगा तब सावे दादा की भी उनमें दिलचस्पी उत्पन्न हुई । 1898 में ही उन्होंने लुमिएर बंधुओं से सिनेमैटोग्राफ खरीदा और तत्कालीन दो प्रसिद्ध पहलवानों पुण्डलिक दादा और कृष्ण नहाबी की कुश्ती का फिल्मांकन किया । इस लघु फिल्म का प्रदर्शन मुंबई के गेटी थिएटर में किया गया था । उन्हीं दिनों मुम्बई में गणितज्ञ आर.पी. परांजपे के सम्मान समारोह का फिल्मांकन भी सावे दादा ने किया और 1903 में एडवर्ड सक्षम के राज्याभिषेक समारोह में भी वे अपने सिनेमैटोग्राफ के साथ मौजूद थे । इस तरह उन्होंने चलचित्र तकनीक का कुशलता से उपयोग किया ।

मुम्बई में सावे दादा के साथ-साथ कलकत्ता में हीरालाल सेन ने भी चलचित्र तकनीक को अपनाया । वे भी पेशे से फोटोग्राफर थे । सन् 1900 में फ्रांस की एक कम्पनी के कुछ कैमरामैन जब कलकत्ता आए तो हीरालाल सेन उनके सहायक बन गए और उन्होंने चलचित्र कला को अत्यंत निकटता से देखा, समझा और जाना । बाद में उन्होंने फ्रांस की इसी कम्पनी से अपने लिए भी कैमरा मंगाया और कलकत्ता में मंचित होने वाले नाटकों का फिल्मांकन शुरू किया । इसके अलावा, उस दौर में कलकत्ता में घटने वाली कुछ प्रमुख घटनाओं को भी हीरालाल सेन ने अपने सिनेमैटोग्राफ के जरिए फिल्मांकित किया । सावे दादा और हीरालाल सेन दोनों ने कैमरे का रचनात्मक इस्तेमाल किया और संभावनाओं के कई ऐसे नए द्वार खोजे जिनके माध्यम से बाद में सिनेमा ने कलात्मक ऊँचाइयों को छुआ ।

4.4 पहला भारतीय कथा चित्र और दादा साहब फालके

शुरुआती दौर में जिन लोगों ने मूवी कैमरे का इस्तेमाल किया, उन्होंने कैमरे के माध्यम से किन्हीं कथा-कहानी अथवा प्रसंगों का फिल्मांकन करने की बजाय तत्कालीन घटनाक्रम को ही आधार बनाया । इस तरह सिनेमा के प्रारंभिक काल में लघु फिल्मों और वृत्तचित्रों का ही निर्माण होता रहा । मगर सन् 1913 में आते-आते पहले भारतीय कथाचित्र के लिए स्थितियाँ तैयार हो चुकी थीं । 21 अप्रैल, 1913 को मुम्बई के आलपिया सिनेमा मे देश की पहली फीचर फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र' का प्रदर्शन गणमान्य लोगों और प्रेस प्रतिनिधियों के सम्मुख किया गया । 3 मई, 1913 को कोरोनेशन थिएटर में फिल्म का नियमित प्रदर्शन प्रारंभ हुआ। कोरोनेशन थिएटर में यह फिल्म लगातार तेईस दिनों तक दिखाई गई जो उस दौर के लिहाज से एक रिकार्ड था ।

कुछ लोगों का मानना है कि 'राजा हरिश्चन्द्र' को पहली फीचर फिल्म का श्रेय नहीं दिया जाना चाहिए । उनका तर्क है कि 'राजा हरिश्चन्द्र' से पहले 1912 में आर.सी.तोरणे और एन.ए.चित्रे महाराष्ट्र के संत पुंडलीक पर फिल्म बना चुके थे । 'पुंडलीक' 18 मई, 1912 को कोरोनेशन में ही प्रदर्शित की गई थी । मगर अन्यान्य कारणों से 'राजा हरिश्चन्द्र' को ही पहली कथा-फिल्म माना गया और इसके निर्माता धुंडीराज गोविंद फालके को भारतीय सिनेमा के पितामह का दर्जा दिया गया । फालके के जीवन और कृतित्व के बारे में बाद में जो साक्ष्य मिले उनसे यह स्पष्ट हो गया कि फालके केवल पथ-प्रदर्शक फिल्म निर्माता ही नहीं थे बल्कि वे भारतीय सिनेमा की अनेक शाखाओं के भी पथ प्रदर्शक थे । जब सिनेमा उद्योग शुरू करने के लिए न तो उपकरण थे और न ही तकनीक और जरूरी साज-सामान । ऐसे कठिन वक्त में दादा साहब फालके ने भारत में फिल्म उद्योग की स्थापना की तो यह उनकी असाधारण दृढ़ता और साहसिकता के कारण ही संभव हो पाया ।

धुंडीराज गोविंद फालके का जन्म नासिक से तीस किलोमीटर दूर त्रयम्बक नामक स्थान पर 30 अप्रैल, 1870 को हुआ था । उनके पिता दादजी शास्त्री फालके मुम्बई में विल्सन कॉलेज में संस्कृत के प्राध्यापक थे । फालके को तत्कालीन हिंदू संयुक्त परिवार के श्रेष्ठ गुण, आदतें और संस्कृत के श्रेष्ठ तत्व विरासत में मिले थे । परम्परा के अनुसार ही उन्हें बचपन में

ही रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों का अच्छा ज्ञान हो गया था और अपने परिवार की जीवन पद्धति के अनुसार उन्होंने वेदों, पुराणों और उपनिषदों का भी अध्ययन किया था । इस अध्ययन में, विशेषकर पुराणों के अध्ययन से प्राप्त ज्ञान और विद्वत्ता फालके द्वारो पौराणिक फिल्मों के निर्माण के दौरान काम आई ।

फालके की प्रारंभिक शिक्षा पहले त्रयंम्बक और बाद में मुंबई में अपने चाचा के घर हुई। स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद फालके ने जे जे स्कूल ऑफ आर्ट्स में प्रवेश ले लिया । यहां उन्होंने ललित कलाओं का अध्ययन किया और इसी दौरान उनकी दिलचस्पी छायांकन कला में हुई । जब फालके अपना पाठ्यक्रम पूरा कर रहे थे, उसी दौरान उन्हें कला भवन के स्टूडियो का सम्पूर्ण भार सौंप दिया गया था । इस तरह उन्होंने छायांकन का काम भी जारी रखा ।

अनेक परिस्थितियों के कारण फालके को जीवन-यापन के लिए कुछ वर्ष तक लोगों की तस्वीरें उतारने और नाट्य मण्डलियों के लिए दृश्यों के पर्दे बनाने का काम करना पड़ा । एक कलाकार होने के नाते फालके ऐसी नीरस जिंदगी से स्वाभाविक रूप से प्रसन्न नहीं थे । अत: 1903 में उन्होंने भारत सरकार के पुरातत्व विभाग में ड्राफ्ट्समैन और फोटोग्राफर का पद ग्रहण कर लिया । बाद में उन्होंने यह नौकरी छोड़ दी और वे राजा रवि वर्मा के लिथोग्राफी प्रेस में काम करने लगे । 1909 में उन्होंने अपना अलग छापाखाना स्थापित किया । मगर छाप-छपाई के काम में उनका मन नहीं लगा । उन्हें नाटक बहुत प्रिय थे और एलफिंस्टर थिएटर में होने वाले नाटकों के वे नियमित दर्शक थे ।

फोटोग्राफी से छापाखाने तक का सफर तय करने वाले फालके फिल्मों की तरफ कैसे मुड़े, इसकी भी एक दिलचस्प कहानी है । 'नवयुग' के फरवरी, 1918 के अंक में फालके ने सिनेमा के कार्य व्यापार को समझाने के लिए लेखमाला लिखी थी, जिसमें उन्होंने सिनेमा की तरफ अपने पहले आकर्षण और बाद में पेश आने वाली परिस्थितियों का जिक्र किया है । खुद उन्हीं के शब्दों में- 1910 में, मुम्बई में, अमेरिका-इंडिया पिक्चर पैलेस में मैंने एक फिल्म 'द लाइफ ऑफ क्राइस्ट' (ईसा मसीह की जीवन गाथा) देखी । इसके पूर्व मैंने कई अवसरों पर अपने मित्रों और परिवार-जनों के साथ फिल्में देखी थीं, लेकिन वह दिन, क्रिसमस के दिनों का वह शनिवार, वही मेरे जीवन में क्रांतिकारी अपरिवर्तन की शुरुआत का दिन था । वो दिन ही भारत वर्ष में ऐसे उद्योग की स्थापना का स्मृति चिह्न है कि बड़े-छोटे सभी व्यवसाय जो आज विद्यमान है उसमें उसका पाँचवां स्थान बन गया है और यह सब मुझ जैसे स्व गरीब ब्राह्मण के द्वारा संभव हो पाया । ईसा मसीह के जीवन 'की महान् घटनाओं को देखते हुए जब मैं सुधबुध खोया हुआ ताली बजा रहा था तब मुझे विचित्र अवर्णनीय भाव की अनुभूति हुई । जब ईसा- मसीह का जीवन मेरे दृश्यपटल पर तेजी से घुमड़ रहा था, उसी वक्त मैं श्रीकृष्ण भगवान और श्री रामचन्द्र भगवान को और गोकुल एवं अयोध्या को मनः पटल पर याद कर रहा था । मैं विचित्र लहर की गिरफ्त में था । मैंने दूसरा टिकट खरीदा और फिल्म को पुन: देखा । इस बार मैंने महसूस किया कि मेरी कल्पना पर्दे पर रूप ग्रहण कर रही है । क्या वास्तव में हो सकता है क्या हम भारत-पुत्र पर्दे पर भारतीय बिम्मों को कभी भी देख पायेंगे समूची रात इसी मानसिक उहापोह में बीती । उसके बाद के दो महीनों तक मैं बिल्कुल भी आराम से नहीं बैठा

और मैंने मुम्बई में दिखाई जा रही सभी फिल्मों को देखा । इसी पूरी अवधि भर मैं हरेक फिल्म की व्याख्या करने में लगातार रहा और यही सोचता रहा कि क्या यहाँ भी फिल्में बनाई जा सकती हैं?

'भारत में इस व्यवसाय की उपयोगिता और इस उद्योग के महत्व पर मुझे कोई संदेह नहीं था । लेकिन मैं यही नहीं समझ पा रहा था कि यह सब मैं कैसे हासिल करूं । सौभाग्यवश, यह बात मेरे मन में किसी गंभीर समस्या की तरह नहीं जमी, और मैंने आत्मविश्वास धारण किया कि ईश्वर मेरा साथ देगा और मैं निश्चय ही सफलता प्राप्त करूंगा । मेरे आत्मविश्वास को इस बात से ज्यादा बल मिला कि मैंने तो ड्राइंग, पेंटिंग वास्तुशिल्प, फोटोग्राफी, रंगमंच और जादू-खेल में बहुत कुछ सीख रखा है और ये सब फिल्म-निर्माण में सहायक हैं । यहां तक कि मैंने तो सोने-चाँदी के मेडल भी इन कलाकौशल में जीते हैं । इन्हीं शिल्पों का आरंभिक प्रशिक्षण मेरी फिल्म को सफलता प्रदान कर दर्शकों को स्वीकार होगी । लेकिन यह सब मैं कैसे रूपाकृत करूं?

'सफलता के लिए अपने उत्साह और विश्वास के बावजूद, मुझे मालूम था कि जब तक मेरे पास कुछ-न-कुछ ठोस आकर्षक चीज नहीं होगी तब तक कोई भी मेरे लिए पूंजी का बंदोबस्त नहीं करेगा । सो, मैंने खुद अपने पास जो कुछ था वह सब गिरवी रखा और अपना सारा प्रयास फिल्म के काम की ओर लगा दिया । अत: मैं विशाल आकाश में उड़ने लगा, और मुझे जरा भी होश नहीं रहा, कि मैं धरती पर किस जगह गिरूँगा । मेरे दोस्तों ने तो सोचा कि मैं बावला हो गया हूँ और मुझे पागलखाने में भर्ती कर दिया जाना चाहिए । मैं दीवाना था, मैं अपनी संपत्ति को गिरवी रखता गया । करीब एक वर्ष तक, मैं उपकरणों, पुस्तकों और कुछ अन्य सामग्रियों. की मूल्य-सूची-इकट्ठा करता गया एवं प्रयोग दर प्रयोग करता गया । इन छह महीनों में मैं सिर्फ तीन घंटा प्रतिदिन ही सो सका । लगातार फ़िल्में देखती हुई, उनींदी मेरी आँखें दिमागी तनाव और निरंतर प्रयोगकर्म के कारण, दुखने लगती थीं । अपने परिवार को संभालना, और फिर संबंधियों से लगातार तिरस्कृत होना, और इन सबके ऊपर अपनी योजना के असफल हो जाने का भय, इन सबने मिलकर मुझ पर इतना दबाव डाला कि मैं उन दिनो अंधा-सा हो गया- मेरी ऑखों को कोर्निया का रोग हो गया । मैं डॉ. प्रभाकर का अत्यंत आभारी हूँ कि उनके द्वारा किये गये समयोचित इलाज ने मेरे दृष्टव्य संसार को पुन: कायम कर दिया और मैं, तीन या चार जोड़ी चश्मों के सहारे अपनी गतिविधियों को जारी रख पाया । लेकिन सबसे बड़ी दवाई तो आशा ही थी ।

'यह स्वदेशी आंदोलन का वक्त था और इस विषय के बाबत ढेर सारी बातें और भाषण होते रहते थे । मेरे लिए, व्यक्तिगत तौर पर, मेरी सुविधाजनक शासकीय नौकरी से इस्तीफा देने का भी यही सबब था और उसी कारण मैंने स्वतंत्र व्यवसाय पसन्द किया । इस अवसर पर सिनेमा के विषय पर मैंने अपने विचार दोस्तों एवं स्वदेशी आंदोलन के नेताओं को भी बताए । लेकिन मेरे सभी दोस्तों ने, यहाँ तक कि पंद्रह वर्ष पुराने दोस्तों ने भी मेरे विचारों को अव्यावहारिक बताया और वे सब मुझ पर हँसे । 'फालके आगे लिखते हैं कि-' अंतत: मेरा एक

दोस्त जो करीब दस वर्ष से मेरे साथ था और मेरे व्यवहार रुपयो-पैसों के लेनदेन की ईमानदारी तथा व्यवसाय के प्रति मेरी लगन और मेहनत पर यकीन रखता था, वह मेरे प्रस्ताव पर सहानुभूतिपूर्वक सोच-विचार करने को राजी हुआ । मैंने उसे अपनी योजना बताई और उसे भरोसा दिलाया । यह व्यक्ति पच्चीस हजार रुपयों की व्यवस्था करने की क्षमता रखता था । वास्तव में तो फ्रांस और अन्य अमरीकी, यूरोपीय कंपनियों में लगे हुए सात करोड़ रुपयों की तुलना में ये पच्चीस हजार रुपए कुछ भी नहीं थे । मेरे स्ट्रूडियो के लिए यह धन बिछ्ल अपर्याप्त था । बहरहाल, किसी स्वतंत्र उद्यम के लिए पूँजी की व्यवस्था कर लेना उन कमीशन एजेन्टों के इस देश में बड़ी उत्साहजनक बात थी जिनकी एकमात्र आकांक्षा केवल विदेशी माल का प्रदर्शन करना और बेचना होता था । यहाँ तक कि फिल्म निर्माण के उपकरण के सूची पत्रों का मंगाना तक उन्हें नहीं भाता था । काम करने के लिए सहकारिता के सिद्धांत से किसी को कोई मतलब नहीं था । इससे मेरे उत्साह को धक्का लगता था । बहरहाल, यह निश्चय है कि यदि मैंने थोड़ी ज्यादा पूँजी हासिल करने का प्रयास किया होता तो मुझे घोर निराशा मिलती और मेरे सारे ख्यालात धरे रह जाते । मेरा यह विश्वास कि पच्चीस हजार रुपयों की पूँजी उस आरम्भ के लिए और जनता की दिलचस्पी बनाने के लिए बहुत पर्याप्त होगी कि जिसके आधार पर दो-एक लाख रुपयों की लागत लगाने को जोखिम फिर कोई भी.उठा लेगा, मेरे तदनंतर अनुभवों ने मेरे विश्वास को सिद्ध किया । मैंने ठीक ही आशा की थी कि तीन या चार फिल्मों से हासिल की गयी आमदनी के आधार पर मेरा स्ट्रूडियो स्वयं विकसित हो जाएगा । बाद में, मेरा दोस्त ज्यादा बड़ी पूंजी लगाने को राजी हो जाएगा या कोई अन्य धनी आदमी इस उन्नतिशील व्यवसाय में शामिल होने के लिए आगे बढ़ेगा । और आखिर में, मैंने यह भी सोचा कि आम भारतीय ऊपर उठकर मेरे काम को पूरा करने मे मुझसे सहयोग करने लगेगा ।

'इस बात का मुझे दर्प है कि मैं अपने काम में कभी भी 'उतावला नहीं हूँ, मैंने इसीलिए, इतनी बड़ी पूँजी इस व्यवसाय में लगाने के पूर्व, विदेश जाकर आश्वस्त होना चाहा कि मेरी कल्पना और फिल्म-निर्माण के वास्तविक काम के बीच क्या अंतर है? विदेश जाने के लिए मुझे बहुत थोड़े से धन की ही जरूरत थी ताकि मैं सिनेमा के उपकरण खरीद सकूं जो कि मेरे लिए इसलिए जरूरी था ताकि मैं पूंजी लगाने वाले अपने दोस्त को कह सकूँ कि इस कला (सिनेमा) में मैं दक्ष हूँ और कि अब पूँजी लगाना जोखिम भरी बात नहीं है । लेकिन वह साधारण धन राशि बहुत ज्यादा भारी ब्याज पर ही मुझे मिली और मैंने सहर्ष उस इकरारनामे पर दस्तखत कर दिए जो कि साहूकार के बहुत पक्ष में था । इस प्रकार, अत्यंत अल्प पूंजी से मैंने इतने विशाल व्यवसाय की नींव डाली जो कि वास्तव में तो किसी चाय दुकान या नाई-दुकान के लिए भी कम थी । लेकिन, ऐसा इसलिए हो पाया क्योंकि मुझमें अपने काम के प्रति बड़ा लगाव था और मुझमें बड़ा आत्मविश्वास था कि मैं निश्चय ही इस नए व्यवसाय को सारे व्यवधान के बावजूद खड़ा करके ही दम लूँगा।' आगे वे लिखते हैं- 'फरवरी, 1912 की पहली तारीख को मैं मुंबई से इंग्लैण्ड के लिए रवाना हुआ । यह मेरी दूसरी विदेशी-यात्रा थी । इसने मुझे मेरे काम के बाबत् आश्वस्त किया क्योंकि फिल्म निर्माण बाबत मेरी कल्पना और विचार उस वास्तविक फिल्म-निर्माण की प्रक्रिया से मेल खाते थे जो मैंने वहाँ देखी । मैंने कुछ

उपकरण खरीदे और अत्यंत मुश्किल से वहाँ के एक प्रख्यात् स्ट्रडियो को देख पाया । दस-पन्द्रह दिनों के अंदर फिल्म-निर्माण के सारे प्रक्रम को देखने और कुछ फिल्मी काम को स्वयं अपने हाथ से करने के बाद मैं वापस लौट आया । विदेश से वापस लौटने के एक महीने के भीतर-भीतर मैंने अपने साहूकार मित्र की आश्वस्ति के लिए कोई 100-200 फुट लम्बी फिल्म तैयार की । यह फिल्म मैंने अपनी पत्नी और बच्चों की मदद से बनाई । लेकिन, मुझे व्यावसायिक अभिनेताओं को काम पर लाने के लिए पूँजी की बहुत सख्त जरूरत थी । एक साहूकार को मैंने इन फिल्मी टुकड़ों को दिखाकर मनवाया कि इन्हें सफलता मिल सकती है, तो वह मुझे आवश्यक धन समुचित गांरटी पर उधार देने को राजी हो गया । मैंने विज्ञापन देकर अपने शिष्यों (कलाकारों) और अन्य कर्मियों को अपने साथ किया । मैंने उन्हें खूब प्रशिक्षित किया और सिर्फ छह महीनों के भीतर राजा हरिश्चन्द्र को मैंने पर्दे पर उतार दिया । इस फिल्म की महज एक प्रिंट से ही मुझे आश्चर्यजनक लाभ मिला । एकदम से इसकी दर्जन भर प्रिंट की मांग आ गई । लेकिन मुझे लगा कि इस एक फिल्म की आमदनी ज्यादा दिन नहीं चल सकती-जैसा कि स्वदेशी आदोलन की गति बनी थी-और सिर्फ इसके आधार पर स्थायी आमदनी का आधार नहीं बन सकता है । इन विचारों के साथ, मैंने दूसरी फिल्म 'मोहिनी भस्मासुर' बनायी । मैंने वर्षा के दो-तीन महीनों भर अपना काम बंद रखा और 3 अक्टूबर, 1913 को अपना स्ट्रडियो मुम्बई से नासिक ले गया । यह जगह कई वजह से सुविधाजनक थी । वहीं पर मैंने 'मोहिनी भस्मासुर' बनाई । सौभाग्यवश, इस फिल्म से भी मुझे पर्याप्त लाभ मिला । इस कारण मुझे बहुत प्रेरणा मिली । मैंने अपनी तीसरी फिल्म 'सावित्री सत्यवान' का निर्माण किया। इस फिल्म ने भी प्रथम और द्वितीय फिल्मों की तरह ही सफलता पाई ।

मैंने सारी आमदनी को अपने स्टूडियो को टिपटाप करने में लगाया । साथ ही साथ मुझे मेरे सम्पन्न मित्र से भी आर्थिक मदद मिलना शुरू हो गई क्योंकि वह अब आश्वस्त हो चुका था कि मेरी फिल्म की एक अकेली प्रिन्ट ही बड़ी आमदनी कर सकती थी । यह वास्तव में उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त तीनों फिल्मों की महज एक-एक प्रिन्ट ने मुझे इतनी आमदनी कराई कि मैंने स्ट्रडियो के निर्माण में जो कर्ज लिया था वह निपट गया ।

इस वक्त तक मुझे विदेशों में भी ख्याति मिल गई । मेरी प्रत्येक फिल्म की 20-20 प्रतियों की मांग हुई । भारत वर्ष में वितरण की समूची एजेन्सी लेने को राजी हो गए, क्योकि यहाँ के पाँच-सात सौ थियेटरों, सभी में, मेरी फिल्मों की मांग बढ़ गई । अत: मैंने सोचा कि अब मुझे पच्चीस-तीस हजार रुपया और लगाकर विद्युत-चलित मशीनरी खरीद लेनी चाहिए । अभी तक हाथ से खींची जाने वाली मशीनरी से काम चलाया जा रहा था जो कि अत्यंत सुस्त थी । मैं एक छोटा-सा स्ट्रडियो भी बनाकर इस उद्योग को सही दिशा प्रदान करना चाहता था । मैंने अपने मित्र को यकीन दिला दिया कि इतना रुपया लगाना पर्याप्त होगा ताकि इस उद्योग को, कम से कम भारतवर्ष में, लाभदायक बनाया जा सकता है, क्योंकि काफी लोग अब प्रशिक्षित हो गए हैं । अत: मैं फिर विदेश गया ताकि नए उपकरण देखकर खरीद लूँ मेरे साथ फिल्में 'मोहिनी भस्मासुर' और 'सावित्री सत्यवान' आदि भी थीं, और मैं इनके-जरिए विदेश में अपनी भावी सफलता को परखना चाहता था । यह मेरी तीसरी विदेश यात्रा थी।'

फालके ने आगे लिखा- 'इस प्रकार मैं उस उद्यम को दो वर्ष तक चलाता रहा, और मैंने फिल्म निर्माण की विभिन्न शाखाओं में लोगों को इतना बढ़िया प्रशिक्षित कर दिया कि उनके काम को देख इंग्लैण्ड और अमरीका में उन्हें जगह मिल सकती थी । ये फिल्में जिनकी कि सिर्फ एक-एक प्रति किसी को लखपति बना सकती थी, वे केवल आठ महीनों में तैयार थीं, और वे भी महज हाथ-से चलने वाली मशीनों के द्वारा, और बिना किसी उपयुक्त स्ट्रडियो के सहारे, और उन कारीगरों के द्वारा जो कि बिछल नए और अनुभवहीन थे कि जिन्हें सिनेमा शब्द के हिज्जे लिखना भी नहीं आता था । यह बिल्कुल आश्चर्यजनक था कि इन तकनीशियनों के द्वारा निर्मित फिल्में विदेशों में संसाधन-युक्त स्ट्रडियो में कार्यरत निपुण विशेषज्ञों द्वारा सराही गईं । अपने स्ट्रडियो में नियुक्त तकनीशियनों के लिए विदेशी फिल्म पत्रिका में इस टिप्पणी को देखकर कौन खुश नहीं होगी कि........ तकनीकी दृष्टि से ये फिल्में आश्चर्यजनक रूप से बेहतरीन हैं।'

उन्हीं दिनों फालके ने फिल्म कम्पनी भी बनाई-फालके फिल्म्स । इस कम्पनी की अपनी अलग टीम थी, जिसमें अभिनेता, अभिनेत्री, नर्तक और अन्य कलाकार शामिल थे । 1917 के अंतिम चरण में फालके फिल्म्स का समावेश हिंदुस्तान फिल्म कम्पनी में हो गया । सेंसर की रिपोर्ट के अनुसार फालके द्वारा निर्मित चार फिल्मों सहित हिंदुस्तान फिल्म कम्पनी ने 97 कथाचित्र और 26 लघुचित्र बनाए थे, जिनमें से अधिकांश फालके फिल्म्स के अंतर्गत फालके द्वारा ही निर्मित थे । हिंदुस्तान फिल्म कम्पनी के लिए निर्मित 'सेतुबंध' उनका अंतिम मूकचित्र था । 1934 में उन्होंने कोल्हापुर सिनेटोन के लिए 'गंगावतरण' का निर्माण किया । फालके तथा निर्माता कंपनी के बीच कुछ विवादों के कारण इस फिल्म के निर्माण में दो वर्ष लग गए । सत्तर वर्ष की उम्र में तनावग्रस्त फालके बीमार पड़ गए । उन्हीं दिनों अपने एक आलेख में फालके ने लिखा- 'गंगावतरण मेरा अंतिम चित्र हो सकता है.....।' फालके के ने शब्द भविष्यवाणी साबित हुए । गंगावतरण उनकी आखिरी फिल्म साबित हुई और बीमारी की हालत में चौहत्तर वर्ष की उम्र में 16 फरवरी, 1944 को उनका निधन हो गया ।

बोध प्रश्न-1

1. भारत में सिनेमा का आगमन कब हुआ?
2. भारत में फिल्मांकन के प्रयास कब किए गए?
3. दादा साहब फालके का जीवन परिचय लिखिए ।
4. मूक सिनेमा से आप क्या समझते हैं?

4.5 मूक सिनेमा का दौर

दादा साहब फालके की फिल्मों की सफलता को देखकर कुछ अन्य रचनात्मक कलाकारों में भी हलचल मचने लगी थी । 1913 से 1918 तक फिल्म निर्माण संबंधी गतिविधियाँ महाराष्ट्र तक ही सीमित थीं । इसी दौरान कलकत्ता में हीरालाल सेन और जमशेदजी मदन भी, फिल्म निर्माण में सक्रिय हुए । फालके की फिल्में जमशेदजी मदन के स्वामित्व वाले सिनेमाघरों में प्रदर्शित होकर खूब कमाई कर रही थीं । इसलिए जमशेदजी मदन इस उधेड़बुन में थे कि

किस प्रकार वे फिल्में बनाकर अपने ही थिएटरों में प्रदर्शित करें । 1919 में जमशेदजी मदन को कामयाबी मिली जब उनके द्वारा निर्मित और रुस्तमजी धोतीवाला द्वारा निर्देशित फिल्म 'बिल्व मंगल' तैयार हुई । बंगाल की पूरी लम्बाई की इस पहली कथा फिल्म का पहला प्रदर्शन नवम्बर, 1919 में हुआ । जमेशदजी मदन (1856- 1923) को भारत में व्यावसायिक सिनेमा की नींव रखने का श्रेय दिया जाता है । वे एलफिंस्टन नाटक मंडली के नाटकों में अभिनय करते थे और बाद में उन्होंने सिनेमाघर निर्माण की तरफ रुख किया । 1907 में उन्होंने कलकत्ता का पहला सिनेमाघर एलफिंस्टन पिक्चर पैलेस बनाया । यह सिनेमाघर आज भी मौजूद है और अब इसका नाम मिनर्वा है । 1918 में मदन का सिनेमा साम्राज्य भारत, बर्मा और श्रीलंका तक फैल गया था । तब जमशेदजी मदन डेढ़ सौ से अधिक सिनेमाघरों के मालिक थे ।

सन् 1919 में 'बिल्वमंगल' बनाने के बाद मदन थिएटर्स ने 1920 और बाद के वर्षों में 'महाभारत', 'सती बेहुला', 'जय माँ जगदम्बे' और 'नल दमयंती' जैसी कई फिल्मों का निर्माण किया । खास बात यह थी कि जहाँ एक तरफ महाराष्ट्र में बनने वाली फिल्मों में महिलाओं के चरित्र भी पुरुषों द्वारा निभाए जा रहे थे, वहीं जमशेदजी की फिल्मों में स्त्री चरित्र स्त्रियों द्वारा ही निभाए गए । मदन ने कुछ एंग्लो इंडियन लड़कियों को अनुबंधित किया और उन्हें अपनी फिल्मों में रोल दिए । 1922 में जमशेदजी मदन ने 'पतिभक्ति' का निर्माण किया था जिसमें खलनायिका की भूमिका एक इतालवी अभिनेत्री सिनोरा मिनैली ने की थी ।

लगभग इसी दौर में कलकत्ता में ही धीरेन गांगुली ने अपने कुछ मित्रों के साथ मिलकर इण्डो-ब्रिटिश फिल्म कम्पनी की स्थापना की । 1921 में गांगुली ने एक व्यंग्य फिल्म 'इंग्लैण्ड रिटर्नड' (बिलाव फेरात) बनाई । यह फिल्म तब काफी सफल रही । इस फिल्म की सफलता को देखकर जमशेदजी ने इसके वितरण अधिकार खरीद लिए । बाद में इंडो-ब्रिटिश फिल्म कम्पनी ने दो फिल्में बनाई और गांगुली फिर हैदराबाद चले आए । यहाँ उन्होंने दो सिनेमाघर तथा एक प्रयोगशाला स्थापित की । लोटस फिल्म कम्पनी के बैनर तले उन्होंने हैदराबाद के निजाम के संरक्षण में 1923 से 1927 के बीच दस फिल्में बनाई । लेकिन जब ग्यारहवीं फिल्म 'रजिया सुल्तान' बनी तो निजाम नाराज हो गए और उन्होंने धीरेन गांगुली को हैदराबाद छोड़कर चले जाने को कहा । इस फिल्म में एक मुस्लिम महिला और एक हिंदू युवक के बीच प्रेम दर्शाया गया था । धीरेन कलकत्ता लौट गए और वहाँ उन्होंने ब्रिटिश डोमिनियन फिल्म कम्पनी की स्थापना की ।

उधर कलकत्ता में जमशेदजी मदन और धीरेन गांगुली सक्रिय हुए तो मुंबई के बाद कोल्हापुर में बाबूराव पेंटर ने भी फिल्म निर्माण में हाथ आजमाया । बाबूराव पेंटर (1890-1954) ने कोल्हापुर में 1917 में महाराष्ट्र फिल्म कम्पनी की स्थापना की । 1918 में उन्होंने पहली फिल्म बनाई 'सैरन्धी', बाद में उन्होंने 'वत्सलाहरण', 'सिंहगढ़', 'राणा हमीर' और 'साहूकारी पाश' जैसी कई फिल्में बनाई । दरअसल बाबूराव पेंटर एक अत्यंत व्यवस्थित और कल्पनाशील फिल्मकार 'थे । उनकी फिल्मों के सैट बेहद भव्य हुआ करते थे और फिल्मांकन भी आला दर्जे का था । उन्हें निर्देशकों का निर्देशक कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी

। वी. सांताराम, दामले, मास्टर विनायक, फत्तेलाल और भालजी पेंढारकर जैसे कई महत्वपूर्ण फिल्मकार बाबूराव पेंटर के सान्निध्य में रहकर ही आगे बड़े । दादा साहब फालके और बाबूराव पेंटर की फिल्मों में बड़ा भारी अंतर था । फालके जहाँ सिर्फ धार्मिक और पौराणिक विषयों पर ही फिल्म बनाते थे, वहीं पेंटर ने ऐतिहासिक कथानकों को भी अपनी फिल्मों का विषय बनाया और इस तरह उन्होंने व्यावसायिक सिनेमा की तरफ कदम बढ़ाया । मूक फिल्मों के दौर में महाराष्ट्र फिल्म कम्पनी द्वारा बनाई गई अंतिम फिल्म 'महारथी कर्ण' थी, जिसे दामले और फत्तेलाल ने निर्देशित किया था ।

वर्ष 1913 से लेकर 1933 तक मूक फिल्मों के उस दौर में 1250 से कुछ अधिक फिल्मों का निर्माण हुआ। इस दौर की एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि फिल्म निर्माण का काम कम्पनियाँ करती थीं । आज की तरह फ्री लाँस प्रणाली का जमाना नहीं था । हर फिल्म एक परिवार की तरह होती थी । जिसमें बड़े से बड़ा कलाकार और छोटे से छोटा कर्मचारी शामिल थे । सभी वेतनभोगी कर्मचारी होते थे और केवल उसी कम्पनी के लिए काम करते थे । फिल्म निर्माण के दौरान ध्वनि का प्रयोग नहीं होने से काम फुर्ती से होता था और निर्देशक, नायिका तथा नायक सभी श्रम से काम करते थे । संवादों का काम परदे पर सब टाइटल लिखकर चलाया जाता था । फिल्मों के शीर्षक भी दो-तीन भाषाओं में रखे जाते थे ।

4.6 मूक फिल्में और सेंसरशिप

सन् 1917 तक सेंसरशिप जैसी कोई व्यवस्था नहीं थी । कौन सी फिल्म प्रदर्शन योग्य है, कौन-सी नहीं, यह तय करने का अधिकार पुलिस अफसरों को होता था । आम तौर पर वे फिल्मों को आसानी से प्रदर्शन की इजाजत दे देते थे, जब तक कि राजनीतिक लिहाज से कोई आपत्तिजनक बात किसी फिल्म में न हो । हॉलीवुड के असर के कारण उन्हीं दिनों मूक फिल्मों के दौर में भी चुंबन, आलिंगन और प्रणय के दृश्य फिल्मों में रखे जाते थे । उस जमाने की एक फिल्म में ललिता पंवार को बेझिझक नायक के होंठों को चूमते देखा जा सकता है । न तो दर्शकों को और न ही नेताओं को ऐसे दृश्यों में नैतिक दृष्टि से कुछ आपत्तिजनक लगता था । फिल्मों को सिर्फ मनोरंजन का माध्यम समझते हुए ऐसे दृश्यों को सहजता से ही लिया जाता था । मगर 1917 में ब्रिटिश हुकूमत ने ब्रिटेन का सेंसरशिप अधिनियम हमारे यहां भी लागू कर दिया । इस अधिनियम को लागू करने के पीछे मुख्य मकसद भारत के अर्धशिक्षित लोगों के सामने पश्चिमी सभ्यता की गलत तस्वीर पेश करने वाली अमेरिकी फिल्मों पर प्रतिबंध लगाना था । भारत के फिल्मकारों ने सेंसरशिप लागू करने का कड़ा विरोध भी किया, क्योंकि सेंसरशिप में भी भेदभाव बरता जाता था । एक क्षेत्र में तो फिल्म को प्रदर्शन की इजाजत दे दी जाती और अन्यत्र या तो उसे प्रदर्शन की इजाजत नहीं दी जाती अथवा व्यापक काट-छॉट के बाद प्रदर्शन की अनुमति दी जाती । नियम तो यह था कि फिल्मों में नग्नता, बलात्कार, हिंसा और वेश्यावृत्ति के दृश्य नहीं दिखाए जाएंगे मगर राजनीतिक लिहाज से फिल्मों में काट-छाँट की जाती थी । ब्रिटिश सरकार की किन्हीं नीतियों की आलोचना करने वाली फिल्मों को आसानी से प्रदर्शन की इजाजत नहीं दी जाती थी । किसी फिल्म का शीर्षक भी अगर 'महात्मा' हो तो इसे प्रदर्शन की अनुमति नहीं दी जाती थी क्योंकि इसे गांधीजी के समर्थन का षड्यंत्र समझा

जाता । कहने का आशय यह कि भारतीय सिनेमा पिछले अस्सी वर्षों से सेंसर के कोप का शिकार बनी, उनमें कोहिनूर फिल्म कम्पनी की 'भक्त विदुर', भालजी और बाबूराव पेंढारकर की 'वंदेमातरम आश्रम' और प्रभात फिल्म कम्पनी की 'स्वराज्य तोरण' प्रमुख हैं ।

4.7 सिनेमा में ध्वनि का आगमन

मूक सिनेमा के दौर में भी फिल्मों की आशातीत सफलता से उत्साहित होकर कुछ कल्पनाशील लोग सिनेमा को आवाज देने के प्रयासों में जुट गये थे । 1930 के आसपास सिनेमा में ध्वनि जोड़ने के प्रयास होने लगे हालांकि तब यह एक अत्यन्त महंगा सौदा था । मुंबई में आर्देशिर ईरानी की इम्पीरियल फिल्म कम्पनी और कलकत्ता में जमशेदजी मदन का मदन थिएटर्स बोलती फिल्म बनाने की कोशिश में जी-जान से जुटे थे । पहली कामयाबी मिली आर्देशिर ईरानी को, जिन्होंने देश की प्रथम सवाक फिल्म 'आलमआरा' बनाई । 14 मार्च, 1931 को मुम्बई के मैजिस्टिक सिनेमाघर में 'आलमआरा' का प्रदर्शन किया गया । मास्टर विठ्टल, जुबैदा, पृथ्वीराज कपूर इस फिल्म के प्रमुख कलाकार थे । निर्देशन में आर्देशिर ईरानी के सहयोगी थे-रूस्तम भरूचा, पेसी करानी और मोती गिडवाणी । 1932 में ही इम्पीरियल फिल्म कम्पनी ने ' आलमआरा' के बाद चार और सवाक फिल्मों का निर्माण किया था । उधर कलकत्ता में मदन थिएटर भी सवाक फिल्मों के प्रदर्शन में कामयाब हुआ । मदन थिएटर की 'जमाई षष्ठी' दूसरी ऐसी सवाक फिल्म है जो 'आलमआरा' के बाद प्रदर्शित हुई थी । 1932 में मदन थिएटर्स ने चौबीस फिल्में बनाकर इम्पीरियल फिल्म कम्पनी को काफी पीछे छोड़ दिया था ।

फिल्मों में ध्वनि के आगमन के बाद भी मूक फिल्में बनती रही, हालांकि उनकी संख्या में निरंतर गिरावट आती रही । सवाक फिल्मों के प्रदर्शन से ठीक पहले 1930 में कुल 130 फिल्मों का निर्माण हुआ था । 1931 में जहां कुल 27 सवाक फिल्में बनीं, वहीं 207 मूक फिल्मों का निर्माण भी हुआ । 1934 में सिर्फ 7 मूक फिल्मों का निर्माण हुआ और इसके बाद मूक फिल्मों का अध्याय समाप्त हो गया ।

पहली सवाक फिल्म बनाने वाले आर्देशिर ईरानी (1885-1960) पहले पुलिस में कार्यरत थे । 1905 में वे अमेरिका की यूनिवर्सल फिल्म कम्पनी की फिल्मों के भारतीय वितरक बने । 1914 में उन्होंने मुम्बई में अलेक्जेण्ड्रा सिनेमाघर खरीदा और 1922 में फिल्म निर्माण में कूद पड़े । इसी साल उन्होंने अपनी पहली मूक फिल्म 'वीर अभिमन्यु' बनाई । अब्दुल अली के साथ मिलकर 1926 में उन्होंने मुम्बई में इम्पीरियल फिल्म कम्पनी की स्थापना की और 'आलमआरा' के निर्माण से पहले वे कुल 130 मूक फिल्मों का निर्माण कर चुके थे । जेबुन्निसा, रूबी मेयर्स, मजहर खान, याकूब खान और जाल मर्चेण्ट आदि कलाकार ईरानी की इम्पीरियल फिल्म कम्पनी की ही देन हैं ।

फिल्मों में ध्वनि आने के बाद सवाक फिल्मों का सिलसिला चल निकला । संवाद और गीत-संगीत भारतीय सिनेमा के अनिवार्य अंग बन गए । 1932 में बनी 'इन्द्रसभा' में 70 गाने थे । इससे साबित हो जाता है कि सिनेमा में ध्वनि के आगमन को लेकर भारतीय फिल्मकार

कितने उत्साहित थे । अब तक सिनेमा में पार्श्वगायन की शुरुआत नहीं हुई थी । न्यू थिएटर्स की ' धूपछाँव' (1936) ने यह शुरुआत भी कर दी थी । 1936 में ही बॉम्बे टॉकीज की 'अछूत कन्या' प्रदर्शित हुई, जिसमें सरस्वती देवी का संगीत था । सरस्वती देवी को प्रथम महिला संगीतकार होने का श्रेय हासिल है । इसी दौर में कई फिल्म कम्पनियाँ स्थापित हुईं, जिनमें प्रभात, न्यू थिएटर्स, बॉम्बे टॉकीज इत्यादि महत्वपूर्ण हैं । न्यू थिएटर्स के वीरेन्द्रनाथ सरकार इंग्लैण्ड से इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर लौटे थे । कलकत्ता में आकर उन्होंने अपनी फिल्म कम्पनी शुरू की और टैगोर तथा शरत के उपन्यासों पर फिल्में बनाई । प्रभात में वी. शातांराम सामाजिक संघर्ष का बिगुल बजा रहे थे तो न्यू थिएटर्स की फिल्में जीवन में प्यार-मोहब्बत का संदेश दे रही थीं । उधर हिमांशु राय और देविका रानी ने बॉम्बे टॉकीज की नींव रखी । 1935 से 1939 में चार वर्षो में बनी बॉम्बे टॉकीज की 16 फिल्मों का निर्देशक एक जर्मन नागरिक फ्राँस ऑस्टिन ने किया था । इस तरह 1913 से 1940 तक के सत्ताईस साल के सफर में भारतीय सिनेमा काफी परिपक्व हो चला था और अब उसने एक उन्मुक्त आकाश की तरफ कदम बढ़ाना शुरू कर दिया था ।

बोध प्रश्न-2

1. मूक सिनेमा पर संक्षिप्त लेख लिखिए ।
2. मूक फिल्में और सेंसरशिप पर अपने विचार लिखें ।
3. सिनेमा में ध्वनि का आगमन कब हुआ?

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.	हिंदी सिनेमा का इतिहास	:	मनमोहन चढ्ढा
2.	इंडियन सिनेमा	:	फिरोज रंगूनवाला
3.	फिल्म विशेषांक	:	नई दुनिया
4.	फिल्म वार्षिकी	:	मप्र फिल्म विकास निगम
5.	फ्लैश बैक	:	टाइम्स ऑफ इंडिया
6.	पटकथा (फालके विशेषांक)	:	मप्र फिल्म विकास निगम
7.	द इंडियन साइलेंट फिल्म	:	जे.बी.एच. वाडिया
8.	लुकिंग बैक	:	फिल्म समारोह निदेशालय

4.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. भारत में मूक सिनेमा के दौर पर निबंध लिखिए ।
2. भारत में सिनेमा की शुरूआत पर प्रकाश डालते हुए दादा साहब फालके के योगदान की चर्चा कीजिए ।
3. सिनेमा के क्रमिक विकास को समझाते हुए मूक सिनेमा के प्रमुख घटनाक्रम को समझाइए ।

4. भारत की पहली कथा फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र' का निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ, समझाइए ।
5. सवाक् फिल्मों की विकास-यात्रा पर प्रकाश डालिए।

इकाई 5 भारत में सिनेमा (भाग- 2)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 समानान्तर सिनेमा

5.3 दर्शकों की बेरुखी

5.4 व्यावसायिक सिनेमा

5.5 नया दौर, नए फिल्मकार

5.6 फिल्मों की वितरण व्यवस्था

5.7 फिल्में सिनेमाघरों तक कैसे पहुँचती हैं?

5.8 संकट में है-सिनेमाघर

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.10 निबंधात्मक प्रश्न ।

5.0 उद्देश्य

पिछली इकाई में सिनेमा के इतिहास का अध्ययन करने के बाद इस इकाई में हम भारतीय फिल्म उद्योग के विविध पहलुओं की चर्चा करेंगे । प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी फिल्म निर्माण और वितरण तथा प्रदर्शन की व्यवस्था को समझ पायेंगे । साथ ही उन्हें हिंदी सिने उद्योग की दो प्रमुख धाराओं-समानान्तर सिनेमा और व्यावसायिक सिनेमा- की अंतरकथा को समझने में भी सहायता मिलेगी ।

5.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व भारत में सिनेमा (भाग-1) में आपने भारत में सिनेमा का आगमन, भारत में फिल्मांकन के प्रयास, पहला भारतीय कथाचित्र और दादा साहब फालके, मूक सिनेमा का दौर, मूक फिल्में और सेंसरशिप, तथा सिनेमा में ध्वनि का आगमन के बारे में पढा ।

सिनेमा का भारत में आगमन एक क्रांतिकारी घटना है । विश्व सिनेमा का इतिहास आज सौ वर्ष पूरे कर चुका हैं और वह जनसंचार का सशक्त माध्यम है ।

'भारत में सिनेमा' (भाग-2) में आप 'समानान्तर सिनेमा, व्यावसायिक सिनेमा, नया दौर तथा नए फिल्मकारों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

5.2 समानान्तर सिनेमा

स्वतंत्रता के उपरांत पचास और साठ के दशक में सिनेमा साफ तौर पर दो विपरीत धाराओं में बँटता चला गया । एक धारा वह थी जिसमें मुख्य तौर पर मनोरंजन प्रधान सिनेमा को स्थान दिया गया । इसे मुख्य धारा का सिनेमा कहा गया । दूसरी तरफ कुछ ऐसे फिल्मकार थे जो जिंदगी के यथार्थ को अपनी फिल्मों का विषय बनाते रहे । उनकी फिल्मों का समानान्तर सिनेमा का दर्जा दिया गया । प्रख्यात फिल्म विशेषज्ञ फिरोज रंगूनवाला के मुताबिक अनुभूतिजन्य यथार्थ को सहज मानवीयता और प्रकट लचात्मकता के साथ रजत पट पर

रूपायित करने वाले निर्देशकों में विमलराय का नाम अग्रिम पंक्ति में है । युद्धोत्तर काल के नवयथार्थवाद से प्रेरित होकन उन्होंने दो बीघा जमीन का निर्माण किया, जिसने बेहद हलचल मचाई । बाद में उन्होंने. 'बिराज बहू', 'देवदास', 'सुजाता', और 'बंदिनी' जैसी संवेदनशील फिल्में बनाई । 'दो बिघा जमीन' को देख कर एक अमेरिकी आलोचक ने कहा था कि 'भारत किसी अन्य प्रकार से न सही, लेकिन राजनीतिक दृष्टि से एक नवस्वतंत्र देश है । इस राष्ट्र का एक फिल्मकार अपने देश के आर्थिक विकास को इस क्रूर और निराश दृष्टि से देखता है, यह बड़ी अजीब बात है ।

समानान्तर सिनेमा की इस धारा को बाद में सत्यजीत राय, ऋत्विक घटक और मृणाल सेन जैसे फिल्मकारों ने आगे बढ़ाया । सत्यजीत राय ने 1955 में अपनी पहली फिल्म बनाई 'पथेर पांचाली' । विभूतिभूषण बंधोपाध्याय के उपन्यास पर आधारित इस फिल्म ने सत्यजीत राय को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठापित कर दिया । 'पथेर पांचाली' का प्रथम प्रदर्शन हमारे देश में न होकर न्यूयार्क में किया गया था । बाद में इसे फ्रान्स के अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में दिखाया गया । फ्रांस के समीक्षक आंद्रे बाजां ने इस फिल्म पर सटीक टिप्पणी लिखी, जिसे पढ़कर फिल्म समारोह की जूरी ने इसे फिर से देखा और बाद में इस फिल्म को सर्वोत्तम मानवीय दस्तावेज का दर्जा देकर पुरस्कृत किया गया । बाद के वर्षो में सत्यजीत राय ने अपराजिता (1956), अपूर संसार (1959), तीन कन्या (1961), शतरंज के खिलाड़ी (1977) और सद्गति (1980) जैसी उत्कृष्ट फिल्में बनाई । 1984 में सत्यजीत राय को सिनेमा के सर्वोच्च राष्ट्रीय पुरस्कार दादा साहब फालके अवार्ड से सम्मानित किया गया । सिनेमा के क्षेत्र में उनके असाधारण योगदान के लिए 1991 में उन्हें विशेषकर ऑस्कर अवार्ड भी दिया गया ।

मृणाल सेन ने 'भुवन शोम' से हिंदी सिनेमा में एक सर्वथा नई रचना प्रक्रिया का शुभारम्भ किया । 'भुवन शोम' ने समानान्तर सिनेमा की धारा को एक नई गति प्रदान की । 1956 में अपनी पहली फिल्म 'रात-भोर' बनाने वाले मृणाल सेन की अपनी अलग पहचान बनी 'बैशेय श्रावण' (1960) से । इसके बाद बनी 'आकाश कुसुम' को भी उनकी उल्लेखनीय कृति माना जाता है । 1965 में मृणाल सेन 'भुवन शोम' लेकर आए, जिसने विचारों के सिनेमा को एक नया अर्थ प्रदान किया । 'भुवन शोम' ने दर्शकों को न सिर्फ झकझोरा, बल्कि उन्हें उत्तेजित भी किया और यह सोचने पर मजबूर किया कि अथाह दलदल से बाहर निकलने का रास्ता आखिर क्या है?

मृणाल सेन के बाद मणि कौल, बासु चटर्जी, अडूर गोपालकृष्णन, कुमार साहनी, श्याम बेनेगल, गोविंद निहलानी, अवतार कौल, गिरीश कर्नाड, प्रकाश झा और सई परांजपे जैसे संवेदनशील फिल्मकारों ने लीक से हटकर यथार्थवादी सिनेमा का निर्माण किया । इन फिल्मकारों की फिल्मों ने विचारों के संसार को एक नई दिशा प्रदान की । जीवन से सीधे जुड़े विषयों पर विचारोत्तेजक फिल्में बनाकर इन फिल्मकारों ने सिनेमा के सृजन शिल्प का अनूठा प्रयोग किया । इनमें से कुछ फिल्मकार आज भी सार्थक सिनेमा की मशाल थामे आगे बढ रहे है । सार्थक सिनेमा के प्रमुख हस्ताक्षर श्याम बेनेगल ने अपने फिल्म कैरियर की शुरुआत विज्ञापन फिल्मों से की । 1973 में उन्होंने पहली फीचर फिल्म बनाई-'अंकुर', गाँवों में शहरी

घुसपैठ के बुरे नतीजों पर आधारित यह फिल्म बेहद कामयाब रही । 'अंकुर' ने कुल 42 पुरस्कार जीते, जिनमें तीन राष्ट्रीय पुरस्कार भी शामिल हैं । इसके बाद श्याम बेनेगल ने 'निशांत' (1975) और 'मंथन' (1976) का निर्माण किया । 'मंथन' को राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया । श्याम बेनेगल की 'मण्डी', 'सुस्मन', 'कलियुग' और 'जुनून' जैसी फिल्में भी बेहद चर्चित रही । 1974 में श्याम बेनेगल के साथ जुडे गोविंद निहलानी ने भी बेनेगल के रास्ते पर आगे चलते हुए कई उम्दा फिल्में बनाई । निहलानी की पहली फिल्म 'आक्रोश' (1981) आदिवासियों के जीवन पर आधारित थी । इस फिल्म' को बेहद पसंद किया गया । बाद में निहलानी ने पुलिस की विवशता पर 'अर्धसत्य', वायुसेना पर 'विजेता', मालिक-मजदूर संघर्ष पर 'आघात', नवधनाढ्य वर्ग के खोखलेपन पर 'पार्टी' और आतंकवाद पर 'द्रोहकाल' जैसी विचारोत्तेजक फिल्में बनाई ।

5.3 दर्शकों की बेरुखी

समानान्तर सिनेमा को प्रारम्भिक दौर में काफी दर्शक मिले । मगर बाद में धीरे-धीरे इस तरह की फिल्मों के दर्शक कम होते चले गए । अस्सी और नब्बे के दशक के आखिर में सार्थक सिनेमा का आदोलन धीमा पड़ गया । प्रकाश झा और सई परांजपे जैसे फिल्मकार व्यावसायिक सिनेमा की तरफ मुड़ गए । श्याम बेनेगल बीच में लम्बे समय तक टेलीविजन के लिए धारावाहिक बनाते रहे । समानान्तर सिनेमा की अंदरूनी कमियों के कारण भी यह आंदोलन सुस्त पड़ने लगा । यह कौनसी खामियाँ थीं, जिनकी वजह से सार्थक सिनेमा पिटने लगा? आइए, अब थोड़ी चर्चा इन खामियों की करते हैं ।

सार्थक सिनेमा आंदोलन से जुड़े फिल्मकारों ने अपने चारों ओर एक ऐसा कल्पनालोक रच डाला है । जिसमें से निकलना न वे चाहते हैं और न उनके लिए अब मुमकिन रह गया है। उनके इस कल्पनालोक में कला के लिए तो भरपूर स्थान है, पर व्यवसाय के लिए बिल्कुल नहीं। जबकि इस मत पर कोई दो राय नहीं हो सकती है कि कला और व्यवसाय में एक वैज्ञानिक रिश्ता होता है । यह रिश्ता ही कला को लोगों से जोड़ता है ।

चलताऊ फिल्मों की भीड़ के बीच जब दो एक साथ-सुथरी फिल्में आई तो इन्हें पहले अच्छा सिनेमा कहा गया । पाद में यह समानांतर सिनेमा हो गया । शुरू में मुख्य धारा की फिल्मों और समानांतर सिंनेमा का कोई दर्शक वर्ग अलग-अलग नहीं था । पर जल्द ही प्रयास करके दर्शकों के बीच भी एक रेखा खींच दी गई । समानांतर फिल्मों के साथ-साथ समानांतर दर्शक वर्ग भी खड़ा हो गया । इससे नुकसान ही हुआ । फिल्मकार को अब उस समानांतर दर्शक वर्ग की ज्यादा फिक्र थी और वह उसी को ध्यान में रखकर फिल्में बनाने लगा । नतीजा यह हुआ कि समानांतर सिनेमा मुख्य दर्शक वर्ग से पूरी तरह कट गया ।

उस समय भी और आज भी व्यावसायिक सिनेमा में भी कुछ अच्छी फिल्में बनी, पर अच्छी फिल्मों और कला फिल्मों को एक नहीं माना गया । ऋषिकेश मुखर्जी की 'सत्यकाम' या गुरुदत्त की 'प्यासा' अच्छी फिल्में थीं, पर इन्हें कला फिल्म का दर्जा नहीं दिया गया । गुलजार की 'आँधी' या 'किताब' हो या ऋषिकेश मुखर्जी की 'आनंद' या फिर शेखर कपूर की 'मासूम',

अच्छी फिल्मों के वे सभी गुण इनमें हैं पर ये सिर्फ अच्छी फिल्में हैं, कला फिल्में नहीं । इसीलिए तमाम फिल्मकार और पूरा का पूरा मीडिया यह मानता है कि कला फिल्मों की शुरुआत मृणाल सेन की ''भुवन शोम'' से हुई ।

कला फिल्मों के निर्देशक अपने को पूरी तरह ईमानदार कहलाना अधिक पसंद करते है। उनकी यही व्यावसायिक ईमानदारी जब कैमरे पर हावी हो जाती है तो कैमरा कथ्य को पकड़ने की बजाय दृश्य को पकड़ने लगता है । सत्यजीत राय की 'शतरंज के खिलाड़ी' या प्रकाश झा की 'दामुल' को याद कीजिए । कोई दृश्य शुरू हुआ तो खत्म होने का नाम ही नहीं लेता । कई मौकों पर ऐसा लगता है कि निर्देशक कैमरा ऑन करके भूल गया है । बेमतलब प्रतीकों, खण्डहरों और चुप्प अंधेरे को कैमरा फोकस किए रहता है और दर्शक इनमें भी मतलब ढूंढने की कोशिश करते रहते हैं ।

ऐसी गतिहीन और घटनाविहीन फिल्में दर्शक देखें तो आखिर क्यों? गोविंद निहलानी की 'आघात' और 'अर्धसत्य' को ही ले लीजिए । 'अर्धसत्य' में निहलानी का कैमरा और दर्शकों का सोच, दोनों की गति में पूरा तालमेल है । लिहाजा फिल्म को व्यावसायिक सफलता भी मिली । 'पार्टी', 'तरंग', 'राव साहब', 'मैस्सी साहब', ' यह वो मंजिल तो नहीं', 'दामुल' जैसी कला फिल्मों की भी यह विडम्बना रही कि सिनेमा जैसा मीडियम जिस गति की अपेक्षा रखता है, वह इनमें नहीं थी ।

गतिहीनता के साथ-साथ कल्पनाशीलता का अभाव भी सार्थक सिनेमा को ले डूबा । कुछेक को छोड़ दें तो ज्यादातर फिल्में ऐसी बनी हैं, जिन्हें देखने के बाद यह सवाल पूरी शिद्दत के साथ उभरता है कि आखिर इन्हें बनाने का मकसद क्या था? प्रदीप कृष्ण की 'मैस्सी साहब' और सुधीर मिश्र की 'यह वो मंजिल तो नहीं' जैसी फिल्में देखकर दर्शक के मन में यह सवाल उठे बिना नहीं रहता कि समसामयिक दौर में इन फिल्मों की क्या प्रासंगिकता है? 'मैस्सी साहब' का कथानक को आजादी के पहले का है, वह भी अंग्रेजी उपन्यास 'जॉनसन' पर आधारित, जो मूलत: इण्डोनेशिया की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है । प्रदीप कृष्ण ने थोड़े-बहुत फेरबदल के बाद इसे भारतीय पृष्ठभूमि में फिल्माकर पेश कर दिया है । इस फिल्म में कल्पनाशीलता का अभाव साफ झलकता है ।

तथाकथित सार्थक सिनेमा की एक त्रासदी यह भी रही है कि वह नकारात्मक दृष्टिकोण को ही प्रमुखता दिए रहा । ये फिल्में जन साधारण के दुखों और संघर्ष को दर्शाती तो हैं उन पर चोट नहीं करती । दर्शकों में वैचारिकता नहीं जगाती । 'मिर्च मसाला' (केतन मेहता) को ही लें । फिल्म का अंत जिस आकस्मिक तरीके से होता है, वह दर्शकों को कोई वैचारिक धरातल प्रदान नहीं करता, उन्हें रास्ता नहीं दिखाता, । बल्कि उनमें हताशा ही जगाता है । कामुक सूबेदार (नसीरूद्दीन शाह) से बचने के लिए गाँव की औरतें उस पर लाल मिर्च का पाउडर फेंकती है । पर्दे पर लाल गुबार छा जाता है और यही फिल्म का अंत हो जाता है । यहाँ सवाल उठना स्वाभाविक है कि सोन बाई (स्मिता पाटिल) और गाँव की तमाम औरतें उस स्थिति में क्या करतीं, जब आसपास मिर्च का पाउडर नहीं होता? तब क्या वे आसानी से सूबेदार की चंगुल में फँस जातीं? शायद नहीं, शायद हाँ । यहाँ दर्शकों को 'प्रतिघात' या 'कुदरत का कानून' का अंत

याद आता है, जिनमें हिंसा का प्रतिकार हिंसा से किया गया है । इसमें अतिरंजना भले ही हो पर ऐसी नकारात्मकता नहीं, जिससे नाकामों के सिवाय कुछ हासिल नहीं होता । इसी तरह 'पार' और 'आघात' के चरित्र भी अंत में असफल ही रहते हैं और कमोबेश यही सब कुछ 'दामुल' में दर्शाया गया है ।

सार्थक फिल्मों के कर्त्ता- धर्त्ता व्यावसायिक सिनेमा के स्टार सिस्टम को कोसते रहे हैं, पर जाने-अनजाने उन्होंने खुद भी स्टार सिस्टम को बढ़ावा दिया है । आज भी सार्थक फिल्मों की चर्चा छिड़ने पर ओमपुरी, नसीरूद्दीन शाह, स्मिता पाटिल या शबाना आजमी के नाम ही बार-बार आते हैं । ऐसा क्यों? 'मंथन' और 'भूमिका' की उतनी चर्चा नहीं होती, जितनी इन फिल्मों में अभिनय के लिए स्मिता की होती है । इसी तरह 'अंकुर' और 'निशांत' के कथ्य पर शबाना का स्टारवाद हावी हो जाता है । 'आक्रोश' और 'अर्धसत्य' के कथानक से अधिक ओमपुरी की चर्चा होती है । 'पार' याद की जाती है तो नसीर के उम्दा अभिनय के लिए । कारण साफ है कि सिनेमाई जादू को आप स्टार सिस्टम से जुदा कतई नहीं कर सकते । तो फिर उसे कोसने से क्या लाभ?

5.4 व्यावसायिक सिनेमा

स्वतंत्रता आंदोलन के दौर में फिल्मकारों ने भी अपने-अपने स्तर पर इस आंदोलन को समर्थन देने के प्रयास किए । तब तक देश में सिने दर्शकों का एक परिपक्व वर्ग तैयार हो चुका था । मनोरंजन और संगीत प्रधान फिल्मों के उस दौर में भी देशभक्ति पूर्ण सार्थक फिल्में बनीं। स्वतंत्रता के ठीक बाद फिल्मकारों की एक नई पीढ़ी सामने आई । इसमें राजकपूर, गुरुदत्त, देवानंद, चेतन आनंद एक तरफ थे तो वी. शांताराम, विमलराय, सत्यजीत राय, मृणाल सेन और ऋषिकेश मुखर्जी, गुलजार और दूसरे फिल्मकारों का अपना नजरिया था । चेतन आंतद की 'नीचा नगर', सत्यजीतराय की 'पथेर पांचाली' और राजकपूर की 'आवारा' जैसी फिल्मों की मार्फत अलग-अलग धाराएँ भारतीय सिनेमा को समृद्ध करती रहीं । बंगाल का सिनेमा यथार्थ की धरती पर खड़ा था तो मुम्बई और मद्रास का सिनेमा मनोरंजन प्रधान था । बॉक्स ऑफिस की सफलता मुम्बई के फिल्मकारों का पहला ध्येय बना और इसी फेर में उन्होंने सपनों का एक नया संसार रच 'डाला । मनोरंजन प्रधान फिल्मों को व्यावसायिक सिनेमा की श्रेणी में रखा गया।

एक दीर्घकालीन संघर्ष के बाद स्वतंत्रता के अभ्युदय से भारतीय अस्मिता और सृजनशीलता को एक नई शक्ति मिली और उसकी अभिव्यक्ति के नए आयाम खुले । फिल्म निर्माण के क्षेत्र में भी कल्पनाशील फिल्मकारों की एक नई पंक्ति सामने आई । इस दौर की ज्यादातर फिल्मों की विषयवस्तु हालांकि पलायनवादी थी मगर उनमें मनोरंजन का तत्व इतना अधिक था कि दर्शकों ने उन्हें बेहद पसंद किया । रोमांटिक और पारिवारिक कथावस्तु वाली फिल्में इस दौर में खूब बनी । ख्वाजा अहमद अब्बास ने 'परदेसी', 'शहर और सपना' , 'दो बूंद पानी' तथा 'सात हिंदुस्तानी' जैसी फिल्में बनाकर अपनी एक अलग जगह बनाई । चेतन आनंद की 'नीचा नगर' पहले ही चर्चित हो चुकी थी । उनके भाई विजय आनंद और देव आनंद ने

अपनी फिल्म निर्माण संस्था खोली तथा 'गाइड' समेत कई उम्दा फिल्में बनाई । राजकपूर ने सामाजिक सरोकारों से युक्त 'आग', 'आवारा', श्री चारसौबीस और 'जिस देश में गंगा बहती है' जैसी फिल्मों के जरिए रंगीन सपनों का एक-अद्भुत संसार रचा । सिनेमा इण्डस्ट्री ने राजकपूर को ग्रेट शो मैन के खिताब से नवाजा । पचास से दशक में ही बी.आर चोपड़ा, ऋषिकेश मुखर्जी, मोहन सहगल, गुरुदत्त और सत्येन बोस जैसे फिल्मकारों ने कुछ उल्लेखनीय फिल्में बनाई ।

भारतीय सिनेमा के इस दौर में कतिपय ऐसे फिल्मकार भी उभरे, जो भव्य पैमाने पर फिल्में बनाने के अभ्यस्त थे । के. आसिफ और कमाल अमरोही की गिनती इसी कोटि के फिल्मकारों में होती हैं । के.ऑसिफ की 'मुगले आज़म' भारतीय सिनेमा के इतिहास में एक स्वर्णिम अध्याय के समान याद की जाती है । कमाल अमरोही की 'पाकीजा' सेल्यूलाइड पर लिखी एक कविता बन गई ।

5.5 नया दौर, नए फिल्मकार

यह युग तकनीकी कुशलताओं का दौर है । सत्तर और अस्सी के दशक में नायक-नायिकाओं और निर्देशकों के नाम से फिल्मों को पहचाना जाता था । आज गीत-संगीत और ध्वनि भी फिल्म के जरूरी पहलू समझे जाते हैं । विषयवस्तु के स्थान पर दर्शक ट्रीटमेंट अर्थात् प्रस्तुतीकरण पर विशेष ध्यान देते हैं । इधर हॉलीवुड की फिल्में भी अब साथ-साथ ही हमारे यहाँ भी प्रदर्शित होने लगी और इस तरह दर्शकों की कल्पनाओं को और व्यापक फलक मिल गया है । स्टीवन स्पीलबर्ग की 'जुरासिक पार्क' की आशातीत सफलता से साबित हो गया कि आधुनिक और नवीनतम तकनीक से सजी-धजी फिल्में भारतीय दर्शकों की भी पहली पसंद है । बाद में 'द लॉस्ट वर्ल्ड', 'स्पीड', 'मिशन इम्पॉसिबल' और 'टाइटेनिक' जैसी फिल्मों ने भी भारतीय सिने बाजार में बेहद धूम मचाई । हमारे यहाँ भी शेखर कपूर, रामगोपाल वर्मा, मणिरत्नमू और सूरज बड़जात्या जैसे युवा और प्रतिभावान् फिल्मकारों की एक नई पीढ़ी उभरी, जिसने बेहद कुशलता से सिनेमा माध्यम का उपयोग किया।

5.6 फिल्मों की वितरण व्यवस्था

हमारे यहाँ हिंदी और दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं में प्रतिवर्ष एक हजार से अधिक फिल्में बनती हैं । देश भर के सभी प्रमुख केन्द्रों पर फिल्मों का एक साथ प्रदर्शन किया जाता है । प्रति शुक्रवार जब नई फिल्मों का प्रदर्शन होता है तो सिने प्रेमियों के बीच एक अनूठे रोमांच और उत्सुकता का माहौल कायम हो जाता है । भारत जैसे विशाल भू-भाग वाले देश में आखिर फिल्मों के वितरण को कैसे नियंत्रित किया जाता है? एक नजर वितरण व्यवस्था पर डालते हैं।

फिल्मों के निर्माण और वितरण तथा प्रदर्शन के तीन प्रमुख अंग हैं- 1. निर्माता, 2. वितरक और 3. प्रदर्शक ।

निर्माता- यह व्यक्ति अथवा संस्था कोई भी हो सकता है । फिल्म निर्माण के लिए जरूरी धन की व्यवस्था करने वाला निर्माता कहलाता है । यह धन निर्माता अपनी तरफ से भी उपलब्ध कस सकता है अथवा वह निजी वित्तदाताओ से भी धन की व्यवस्था कर सकता है,

जिन्हें फिल्म इण्डस्ट्री की भाषा में फाइनेन्सर्स कहते हैं । निर्माता अथवा प्रोड्यूसर को पाँच श्रेणियों में रखा जा सकता है-

1. स्थापित निर्माता - ये वे निर्माता हैं जिनकी अपनी फिल्म कम्पनी होती है और जिनका अपना स्टूडियो होता है- । ऐसे निर्माताओं के
पास आमतौर पर धन की कमी नहीं होती । उनकी फिल्मों को वितरक भी आसानी से मिल जाते हैं, क्योंकि स्थापित निर्माताओं की बाजार में अपनी एक साख भी होती है ।

2. अस्थायी निर्माता - ये वे लोग हैं जो सिने संसार के ग्लैमर और आकर्षण के सहारे यहाँ खिंचे चले आते हैं । दो-चार फिल्में बनाकर ये लोग रातों-रात पैसा बनाने के फेर में फिल्में बनाते हैं । अगर फिल्में चल निकलें तो इनमें से कुछ लोग स्थायी रूप से यही पेशा भी अपना लेते हैं ।

3. निर्देशक सह निर्माता - इन्हें प्रतिबद्ध फिल्मकार माना जाता है । इसमें निर्माता और निर्देशक एक ही व्यक्ति होता है । फिल्म के लिए धन की व्यवस्था भी ये लोग अपने स्तर पर ही करते हैं ।

4. प्रेरक निर्माता - अच्छे और विचारवान् सिनेमा को बढ़ावा देने के लिए भी कुछ सृजनशील लोग फिल्म निर्माण में कूद पड़ते हैं । इन्हें प्रेरक निर्माता कहा जाता है । सरकारी स्तर पर राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम प्रेरक निर्माता की भूमिका निभाता है । देश में अच्छे और सार्थक सिनेमा को बढ़ावा देने के लिए फिल्म विकास निगम फिल्मों के निर्माण के लिए धन मुहैया कराता है ।

5. सहकारी समितियाँ - कुछ राज्यों में, विशेष तौर पर दक्षिण में, सहकारी समितियां भी फिल्मों के लिए धन उपलब्ध कराती हैं ।

वितरक- निर्माता द्वारा धन की व्यवस्था करने के बाद एक कुशल निर्देशक की देखरेख में फिल्म तैयार की जाती है । तैयारशुदा फिल्म को सिनेमाघरों तक पहुँचाने का काम वितरक करते हैं । इस तरह वितरक अत्यंत महत्वपूर्ण व्यक्ति है । वह फिल्म निर्माता और प्रदर्शक के बीच एक कड़ी के रूप में काम करता है । सिनेमा के शुरुआती दौर में फिल्म निर्माता और प्रदर्शकों के बीच सीधा संबंध था । मगर ज्यों-ज्यों सिनेमाघर की संख्या बड़ी, वितरकों का एक अलग वर्ग विकसित होता गया और आज फिल्मों के प्रदर्शन के सिलसिले में वितरकों के महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता । एक लिहाज से सिने वितरक फिल्म बाजार के सर्वेसर्वा हैं । फिल्मों का भविष्य इनके हाथ में ही है । ये वितरक ही हैं जो किसी फिल्म को देश भर के विभिन्न केन्द्रों पर एक साथ प्रदर्शित करते हैं ।

प्रदर्शक- यह वर्ग फिल्मों का प्रदर्शन करता है ।

5.7 फिल्में सिनेमाघरों तक कैसे पहुँचती हैं ?

फिल्मों के वितरण की एक नियंत्रित व्यवस्था देश भर में लागू है । इस व्यवस्था के तहत फिल्मों का प्रदर्शन आठ वितरण क्षेत्रों में एक साथ किया जाता है । ये वितरण क्षेत्र इस प्रकार हैं-

1. मुम्बई, 2. दिल्ली-उतर प्रदेश, 3. राजस्थान, 4. बंगाल, 5. पंजाब, 6. दक्षिण, 7. ओवरसीज और 8. वीडियो ।

प्रत्येक वितरण क्षेत्र का एक वितरक होता है, जो फिल्म के निर्माता से प्रदर्शन के अधिकार खरीदता है । आम तौर पर फिल्म के प्रदर्शन के अधिकार 11 साल के लिए दिए जाते हैं । प्रदर्शन अधिकार हासिल करने के बदले वितरक उस फिल्म के निर्माता को कितनी रकम अदा करेगा, यह तय करने के लिए दो तरह की प्रणाली अपनाई जाती है-

1. एकमुश्त रॉयल्टी पर फिल्मों का प्रदर्शन और
2. मिनिमम गारण्टी (एमजी) प्रणाली ।

एकमुश्त रॉयल्टी पर फिल्मों के प्रदर्शन की व्यवस्था के तहत वितरक किसी फिल्म के वितरण अधिकार हासिल करने के बदले फिल्म के निर्माता को एक तयशुदा रकम का भुगतान करता है और इसके' बाद फिल्म के प्रदर्शन से होने वाली आय पर पूरी तरह वितरक का ही अधिकार रहता है । दूसरी तरफ मिनिमम गारण्टी प्रणाली में पहले वितरक एक तयशुदा रकम फिल्म निर्माता को अदा करता है । बाद में फिल्म के प्रदर्शन के दौरान यह अदा की गई रकम और उसके ऊपर बीस प्रतिशत तक की कमाई पर वितरक का अधिकार रहता है । इसके बाद अगर अधिक आय (ओवरफ्लो) है तो इसमें पचास फीसदी रकम निर्माता को अदा करनी पड़ती है और शेष पचास फीसदी रकम वितरक अपने पास रखता है ।

दूसरी तरफ कुछ फिल्म निर्माता कम्पनियां ऐसी भी हैं जिनका अपना वितरण नेटवर्क है जैसे राजश्री प्रोडक्शन या चेन्नई की एवीएम इनका अपना वितरण नेटवर्क है, इन्हें वितरकों के सहारे की जरूरत नहीं होती।

प्रदर्शक-फिल्म निर्माता और वितरण के बाद प्रदर्शक अथवा सिनेमाघर फिल्मों की वितरण व्यवस्था के एक और महत्वपूर्ण अंग है सिनेमाघरों में फिल्मों के प्रदर्शन के तीन तरीके हैं-

1. सिनेमाघर का मालिक स्वयं किसी फिल्म को किराए पर लेकर फिल्म का प्रदर्शन करे ।
2. सिनेमाघर का मालिक अपने थिएटर को एक निश्चित अवधि के लिए तयशुदा रकम पर किराए पर दे ।
3. अस्थायी अथवा टूरिंग सिनेमाघर के जरिए फिल्म का प्रदर्शन किया जाए । गाँवों और छोटे कस्बों में तथा पहाड़ी इलाकों में अस्थायी और टूरिंग सिनेमाघर ही फिल्म प्रदर्शन के महत्वपूर्ण साधन हैं ।

5.8 संकट में है सिनेमाघर

एक लम्बे अर्से तक सिनेमाघरों के माध्यम से फिल्मों का प्रदर्शन करना फायदेमंद सौदा रहा । मगर जब से केबल, टेलीविजन ने अपने पैर पसारे हैं, सिनेमा का व्यापार मंदा हो गया है।

नये चैनलों के बाजार को गर्म रखने के लिए दर्शकों को हर रोज नए-नए व्यंजन परोसने का प्रयास किया जाता है और इसी प्रयास में केबल, टी.वी. नई हिन्दी फिल्में रिलीज होने के एक सप्ताह के भीतर ही दर्शकों के घर में पहुँचा देता है । जाहिर है कि दर्शक भी खुश हैं और इन चैनलों के आयोजक भी । लेकिन इसका परिणाम यह है कि आज से करीब 15-20

वर्ष पहले जिन थियेटरों में हिन्दी फिल्में स्वर्ण और रजत जयंती के रिकार्ड कायम करती थी आज वहीं एक नई हिन्दी फिल्म एक हफ्ते तक भी दर्शकों की भीड़ नहीं जुटा पाती ।

सवाल उठता है कि हिन्दी थियेटरों को लगे इस ग्रहण के लिए जिम्मेदार कौन है? 1982 में वीडियो ने भारत में प्रवेश किया और जल्दी ही अपने पैर पसारने शुरू कर दिए, किंतु सरकार की तरफ से वीडियो पायरेसी पर नियंत्रण के लिए कोई सख्त कदम नही उठाया गया । बल्कि सरकार वीडियो रिकार्डर तथा रिसीवर के आयात संबंधी नियमों में ढिलाई ही बरतती रही। एक गैरसरकारी सर्वेक्षण के अनुसार आज कानूनी रूप से वैध तथा अवैध वीडियो कैसेट की बिक्री 1:20 के पैमाने पर हो रही है । सरकार ने 1989 में सिनेमा उद्योग की समस्याओं पर विचार करने के लिए दो कमेटियां बैठाई थी । इनमें एक कमेटी वीडियो पायरेसी तथा केबल टी.वी. से सिनेमा उद्योग पर प्रभाव पर बैठाई गई थी । दूसरी कमेटी सिनेमा उद्योग की अन्य समस्याओं पर विचार करने के लिए बुलाई गई थी । पहली कमेटी ने वीडियो पायरेसी के लिये कॉपीराइट अधिनिमय में कई कमियों को जिम्मेदार ठहराया और इसमें संशोधन का सुझाव दिया।

कॉपीराइट अधिनियम 1957 की धारा 14 सिनेमेट्रोग्राफिक फिल्मों के मामले में किसी भी व्यक्ति द्वारा फिल्म के कापी करने या उसे पूरी अथवा उसका कुछ हिस्सा दिखाने पर प्रतिबंध लगाती है । इस धारा के तहत फिल्म को ब्रॉडकास्ट करने तथा उसके साउंड ट्रेक के किसी भी भाग का सार्वजनिक प्रयोग गैरकानूनी है, लेकिन यह धारा वीडियो पायरेसी पर नियंत्रण में समर्थ नहीं हो पाई । अत: 1983 तथा 1984 में कानून में कुछ महत्वपूर्ण संशोधन किए गए । संशोधनों के तहत सजा और जुर्माना बढ़ाया गया और पायरेसी को गैर-जमानती अपराध घोषित किया गया । लेकिन यह संशोधन भी वीडियो पायरेसी को रोकने में समर्थ नहीं हो पाए ।

थियेटरों के घाटे में जाने का एक बड़ा कारण मनोरंजन कर का प्रतिशत अधिक होना भी है । सिनेमा उद्योग प्रतिवर्ष पचास करोड़ रुपये का घाटा झेल रहा है । राज्य सरकारों द्वारा सिनेमा उद्योग से प्रतिवर्ष 800 से 900 करोड़ रु. मनोरंजन कर के रूप में वसूला जा रहा है । हालांकि थियेटर मालिक काफी पहले से सरकार से मनोरंजन कर में छूट की मांग करते रहे हैं । 1952 में एस.के.पाटिल की अध्यक्षता में बनी कमेटी ने मनोरंजन कर 25 प्रतिशत करने की सिफारिश की थी । उस समय भी सिनेमाघरों में सौ प्रतिशत मनोरंजन कर वसूला जा रहा था, किंतु वह सिनेमा उद्योग के विस्तार का समय था इसीलिए सिनेमा उद्योग करों के भारी बोझ को सह गया था । लेकिन अब बदली हुई परिस्थितियों में थियेटर मालिकों के लिए सौ से 125 प्रतिशत मनोरंजन कर भारी पड़ रहा है । गौरतलब है, केरल, कर्नाटक आदि दक्षिण भारतीय राज्यों में मनोरंजन कर 25 प्रतिशत ही है, जबकि उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में एक सौ पच्चीस प्रतिशत तथा मुम्बई में सौ प्रतिशत है । हिन्दी थियेटरों पर मंडराए संकट का एक बड़ा कारण हिन्दी फिल्म निर्माताओं तथा वितरकों के बीच आपसी समझ में कमी होना है। हिन्दी फिल्म निर्माता सिनेमा तथा केबल को एक साथ कॉपीराइट बेच देते हैं, जिससे थियेटरों के साथ-साथ केबल पर नई फिल्म तुरन्त आ जाती है । जबकि दक्षिण भारतीय फिल्मों के

निर्माता ऐसा नहीं करते । यदि कोई फिल्म निर्माता एक साथ कॉपीराइट बेचता है तो उसे ब्लैकलिस्ट कर दिया जाता है । यही वजह है कि आज भी एक तेलुगू-तमिल फिल्म एक राज्य में इतना बिजनैस देती है जितना एक हिन्दी फिल्म पूरे भारत में भी नहीं दे पाती । इसका समाधान तब तक नहीं हो सकता जब तक हिन्दी फिल्म निर्माता व वितरक के बीच कॉपीराइट बेचे जाने के संबंध में कोई समझौता न हो जाए । लेकिन अफसोस की बात यह है कि हिन्दी फिल्म निर्माताओं में स्वेच्छाचारिता का रिवाज रहा है । वह एफ.डी.सी (फिल्म डिस्ट्रिब्यूटर कौंसिल) तथा एफ.एम. सी. (फिल्म मेकर्स कम्बाइन) द्वारा संयुक्त रूप से लिए गए फैसलों को तोड़ते आये हैं ।

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.	सिनेमा के सौ वर्ष	:	फिरोज रंगूनवाला
2.	हिंदी सिनेमा का इतिहास	:	मनमोहन चड्ढा
3.	एनसाइक्लोपीडिया ऑफ इंडियन सिनेमा	:	आशीष राजाध्यक्ष, पॉल विलमैन
4.	ग्लोरियस ईयर्स ऑफ इंडियन सिनेमा	:	टी. रामचन्द्रन
5.	नया सिनेमा	:	विनोद भारद्वाज
6.	स्मरणिका	:	सेन्ट्रल सिने सर्किट एसोसिएशन

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्वतंत्रता के उपरांत भारतीय सिनेमा की प्रमुख प्रवृत्तियों की चर्चा कीजिए ।
2. समानान्तर सिनेमा के महत्व को समझाते हुए इस आंदोलन की वर्तमान दशा पर निबंध लिखिए।
3. व्यावसायिक सिनेमा बनाम समानान्तर सिनेमा के संघर्ष को विस्तार से समझाइए ।
4. फिल्मों के वितरण की मौजूदा प्रणाली में निर्माता, वितरक और प्रदर्शक के योगदान को रेखांकित कीजिए ।
5. सैटेलाइट चैनल के आगमन के बाद देश में सिनेमाघरों को किन मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है?

इकाई 6 भारत में दूरदर्शन

भारत में टेलीविजन के इतिहास की अब तक की अवधि इसके प्रभाव की अनुभूति देने के लिए काफी है । एक ऐसे समय में जबकि सूचना-टेक्नॉलोजी के क्षेत्र में तेजी से विकास हो रहा है, भारतीय परिप्रेक्ष्य में टेलीविजन का विस्तार भी इसी के अनुरूप होना चाहिए । दूरदर्शन ने इस बढती टेक्नॉलोजी के बीच विकास के कई चरण पार किए हैं । आकड़ों को देखें तो इसकी प्रगति प्रभावपूर्ण रही है । जनवरी, 2000 में दूरदर्शन के 1000 ट्रांसमीटर्स थे तथा 20 विभिन्न चैनल देश में कार्यक्रम तैयार करने में संलग्न थे । अपने लगभग 40 साल के इतिहास में भारतीय दूरदर्शन ने विकास करते हुए देश के 73 प्रतिशत लोगों तक अपनी पहुंच बनाई एवं विस्तार किया । 350 करोड़ दर्शकों के मन को छुआ । भारत में दूरदर्शन के विकास को तीन चरणों में विभक्त किया जा सकता है ।

1. दूरदर्शन का उपेक्षा-काल 1959 से 1981
2. दूरदर्शन का महत्वपूर्ण प्रगतिकाल 1982-1990
3. दूरदर्शन का उपग्रह-आक्रमण काल 1991-2000

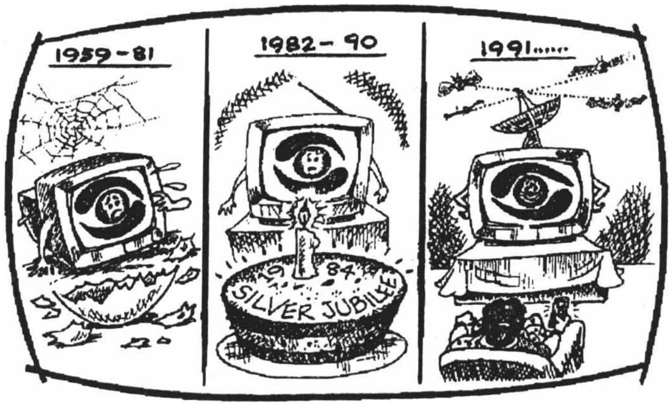

यद्यपि 15 सितम्बर, 1959 में भारत ने दूरदर्शन ने अपना कार्य शुरू किया । प्रारम्भ धीमी गति का रहा । उन दिनों अपनी शैशवावस्था, में मात्र दिल्ली से दूरदर्शन ने हर सप्ताह दो बार एक-एक घण्टे के कार्यक्रमों से अपनी यात्रा शुरू की । चाल इतनी धीमी थी कि 20 साल बाद मुम्बई में 1972 में दूरदर्शन का दूसरा केन्द्र स्थापित किया गया । अपनी रजत जयंती वर्ष 1984 में इसका दिल्ली में दूसरा चैनल प्रारम्भ हुआ । तब तक खुले इसे सभी 1.1 बड़े केन्द्रों पर एक ही चैनल था ।

1 दूरदर्शन का उपेक्षा काल-1959-1981

दूरदर्शन के विकास के प्रारम्भिक काल को इसलिए उपेक्षा-काल की संज्ञा दी गई है कि इस अवधि में कहीं कोई रोमांचक सूत्र इससे नहीं जुड़ा । केवल सेटेलाईट इंस्ट्रक्शनल टेलीविजन एक्सपेरिमेन्ट (Site) जरूर 1975-76 में प्रारम्भ किया गया । इस कार्यक्रम से देश के छह राज्यों के 2400 गांवों को जोड़ा गया । ये गांव चार भाषाएं बोलने वालों के थे । इन कार्यक्रमों के प्रभाव का पता लगाने के लिए कई मूल्यांकन सर्वेक्षण भी हुए और यह तथ्य भी सामने

आया कि कार्यक्रमों का प्रभाव सकारात्मक रहा और 'साईट'' कार्यक्रम को सफल माना गया क्योंकि इससे दर्शकों के ज्ञान एवं प्रवृत्तियों के बदलाव के सन्दर्भ में कार्यक्रम का गहरा प्रभाव पड़ा । विश्व-स्तर पर भी इस जनसंचार परियोजना के प्रयोग को मान्यता मिली । 'साईट' का प्रयोग की सफलता ने स्वदेश में निर्मित उपग्रहों के माध्यम से इन्सेट श्रृंखला (Insat Site) प्रारम्भ करने की प्रेरणा दी । इसकी विस्तृत एवं विविध क्षमताओं ने कार्यक्रमों के विस्तार को बल दिया ।

दूसरी उपलब्धि का श्रेय 1975 में प्रारम्भ किए गए ' प्राथमिक विद्यालय सेवा ' को जाता है । यह सेवा भी दिल्ली से शुरू हुई । यह प्राथमिक कक्षाओं के पाठ्यक्रम पर आधारित कार्यक्रम था । इसके बाद दूरदर्शन कार्यक्रमों की गुणात्मकता बड़ाने पर जोर दिया गया । ऑल इण्डिया रेडियो के महानिदेशक (उस समय जिनके अंतर्गत ही दूरदर्शन था) पी.सी. चटर्जी, दिल्ली दूरदर्शन के निदेशक एम.एम. चावला निरन्तर दूरदर्शन के कार्यक्रमों की पूर्व समीक्षा करते थे । तत्कालीन सूचना एवं प्रसारण मंत्री भी उन कार्यक्रमों पर नजर रखते थे । उस समय 'सब चलता है का आज के दूरदर्शन अधिकारियों एवं कर्मियों का रवैया चलना संभव नहीं था।

उपेक्षा काल में 1975 का वर्ष देश के सभी समाचार माध्यमों के इतिहास का सबसे बुरा काल रहा । इस वर्ष से देश में आपात काल लागू कर दिया गया था । माध्यमों के सिर पर सेन्सर की कैंची लटका दी गई थी । इलेक्ट्रॉनिक माध्यम सीधे सरकारी-नियंत्रण में थे ही । प्रेस की आजादी भी छीन ली गई और दूरदर्शन एवं आकाशवाणी को तो सरकारी- भाषा ही बोलने को विवश होना पड़ा । तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने सरकारी इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों की कांफ्रेंस में आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के लिए विश्वसनीयता (Credibilitiy) की पुन परिभाषा करते हुए कहा, 'आकाशवाणी और दूरदर्शन' सरकार के अपने विभाग हैं और इनका उपयोग करने का सरकार का वैसा ही उद्देश्य है जैसा कि अन्य विभागों का उपयोग करने में रहता है ।

2 दूरदर्शन का महत्वपूर्ण प्रगीतकाल – 1982-90

यों दूरदर्शन एक बने बनाए ढांचे के साथ कार्य करता रहा । लेकिन 1982 का वर्ष इसकी परीक्षा का समय रहा । यह एक ऐसा वर्ष था जिसमें इसको कई उपलब्धियों के लिए श्रेय भी मिला और कई चुनौतियों का सामना भी करना पड़ा । 15 अगस्त, 1982 को 4 अलग-अलग परियोजनाएं दूरदर्शन ने हाथ में ली । इनमें (अ) श्वेत-श्याम टी.वी. को रंगीन टी.वी. करना (ब) राष्ट्रीय नेटवर्क कार्यक्रम प्रारम्भ करना । (स) माइक्रोवेव लिंकेज उपलब्ध कराना और (द) इन्सेट-आई.ए. का संचालन करने के कार्य शामिल थे । इंदिरा गांधी के लाल किले से 15 अगस्त, 1982 का राष्ट्र के नाम सम्बोधन का लाइव-टेलिकास्ट या प्रसारण सही ट्रांसमीटर्स के द्वारा करना दूरदर्शन का पहला रंगीन राष्ट्रीय- टेलीकास्ट या प्रसारण था ।

कुछ महीनों के बाद दूरदर्शन के समक्ष 'एशियाड' खेलों के कवरेज का चुनौतीपूर्ण काम करने की चुनौती आई । इसमें पांच हजार प्रतिस्पर्धी सामने थे । इसमें हवा में खेले गए खेलों से लेकर जल में किए जाने वाले रोमांचक खेलों, सूरज की रोशनी और बनावटी-रोशनी के द्वारा कवर होने वाले इन्डोर और आउट डोर खेलों का कवरेज करने का काम शामिल था । इन

कार्यक्रमों को बाद में सम्पादित करके प्रसारित करना भी शामिल था । टी.वी. को हू-बहू एवं यथार्थ में जैसे खेल थे वैसे ही रंगमय वातावरण को स्क्रीन पर प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी थी। इससे दुनिया में दूरदर्शन को अपनी साख जमाने का मौका मिला । एक पहचान मिली ।

1984 में दूरदर्शन ने अपनी रजत जयंती मनाई । विकास के रूप में दिल्ली से दर्शकों के लिए दूसरा चैनल भी प्रारम्भ किया गया । इस प्रकार मैट्रो का एन्टरटेनमेण्ट चैनल शुरू हुआ। यह चैनल देशभर के लिए उपलब्ध कराया गया । लेकिन दूरदर्शन के दोनों चैनल हिन्दी और अंग्रेजी इन दोनों भाषाओं में कार्यक्रम प्रस्तुत करने तक सीमित थे । क्षेत्रीय दर्शकों को अपनी-अपनी भाषाओं में कार्यक्रम देखने की इच्छाऐं थी । इस बात का एहसास करते हुए दूरदर्शन ने अपना अगला कदम उठाया और तीन स्तरों पर दूरदर्शन सेवाओं का विस्तार किया । राष्ट्रीय क्षेत्रीय एवं स्थानीय दूरदर्शन सेवाएं चालू की गई । महाराष्ट्र के सभी दूरदर्शन केन्द्रों को मुम्बई से जोड़ते हुए पहली क्षेत्रीय सेवा 1986 में शुरू की गई । इन कार्यक्रमों का लक्ष्य राज्य की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विरासत को उजागर करना था । इस परियोजना को बाद में अन्य राज्यों तक बढ़ाया गया । फिर 20 में से 15 चैनलों के कार्यक्रमों को क्षेत्रीय भाषाओं में प्रसारित किया जाने लगा ।

दूरदर्शन ने अपने इन विस्तार एवं गुणात्मकता पर बल दिए जाने के कारण एक प्रतिष्ठित छवि की पहचान कायम की । लेकिन धीरे- धीरे दूरदर्शन ने इस बात की ओर उपेक्षा दिखाई कि आखिर कैसे और क्यों, इस प्रकार की उपलब्धियाँ दूरदर्शन को होना सम्भव हुआ । इसका उदाहरण है 1989 की फरवरी में सेन्ट्रल प्रोडक्शन सेन्टर (सी.पी.सी.) का उद्घाटन । इस योजना पर 50 करोड़ रुपए खर्च किए गए । इस केन्द्र की स्थापना के पीछे कार्यक्रमों में गुणवत्ता पैदा करना था ।

सी.पी.सी. को उत्कृष्टता पैदा करने का केन्द्र मानकर देश की महत्वपूर्ण प्रतिभाओं को आकृषित करने का लक्ष्य सामने रखा गया । बेहतर कार्यक्रमों के निर्माण की अभिलाषा रखी गई ताकि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम बनें और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के तहत उनका विक्रय भी संभव हो सके । सी.पी.सी. द्वारा तैयार अनेक कार्यक्रमों का विभिन्न दूरदर्शन केन्द्रों से प्रसारण हुआ । उन्हें दोहराया भी गया । लेकिन दुख की बात यह है कि वे सारे प्रयास अब इतिहास का हिस्सा मात्र रह गए हैं । इस कार्यक्रम निर्माण केन्द्र के पीछे की अवधारणा और इसे आधुनिकतम सुविधाएँ देने के विचार को अब तिलाजंलि दे दी गई है । अब सी.पी.सी. का कार्य खेल, समसामयिक घटनाओं के कवरेज एवं समाचार तैयार करना मात्र रह गया है । इस प्रकार देश में श्रेष्ठ सुविधाओं वाले केन्द्र की क्षमता का कम उपयोग करना या उसके प्रति उपेक्षा भाव रखने का एक अवांछनीय पहलू भी दूरदर्शन के साथ जुड़ा है ।

3 दूरदर्शन का उपग्रह आक्रमण काल – 1991-2000

20वीं सदी के अन्तिम दशक में उपग्रह टेलीविजन ने भारतीय आकाश पर आक्रमण कर दिया । गल्फ युद्ध की लाइव रिपोर्ट्स के साथ दुनिया भर के टेलीविजन चैनलों ने 1991 में हमारे घर के कमरों में प्रवेश कर लिया । स्टार और जी.टी.वी. ने दूरदर्शन के लिए खतरे की घंटी बजा दी । दूरदर्शन मुख्य रूप से हिन्दी में कार्यक्रम प्रस्तुत करता है । भारत के जैन

टी.वी. और एशिया नेट की क्षेत्रीय भाषाओं की दक्षिण भारत को कवर करने वाली सेवाओं ने भी अपने को दूरदर्शन से प्रतिस्पर्द्धा में जोड़ा ।

इस समय भारत में 35 सेटेलाईट चैनल हैं जिनमें 20 चैनल दूरदर्शन के हैं । ये बहुउद्देशीय एवं बहुभाषायी उपग्रह नेटवर्क समाचार, खेल कूद, संगीत, शिक्षा, फिल्म आदि प्रोग्रामों के द्वारा विभिन्न राज्य एवं दर्शकों की मांग की पूर्ति करते हैं । दरअसल एक प्रवृत्ति यह देखने में आती है कि यह मनोरंजक कार्यक्रमों की प्रतिस्पर्द्धा ही कार्यक्रमों पर अपना आधिपत्य जमाए हुए है और इस प्रक्रिया में शिक्षा एवं सूचना देने का इस सशक्त माध्यम का दृष्टिकोण कहीं गौण और उपेक्षित हो गया है । सभी चैनल अपने अस्तित्व के लिए विज्ञापनों पर निर्भर हैं । वे उन्हीं कार्यक्रमों को इसलिए तरजीह देते हैं जो उनके लिए अधिक विज्ञापन के द्वारा व्यवसाय जुटा सकें । यद्यपि किसी माध्यम की सफलता उसके कार्यक्रमों की गुणवत्ता पर आधारित है लोकेन यह तो प्रतिस्पर्द्धा और व्यावसायिकता का युग है ।

अभी हाल ही में अचानक एक परिवर्तन हमारे दृष्टिकोण में जरूर हुआ है वह है दर्शकों का विचारों और सृजनात्मकता के प्रति बढ़ता रुझान होने के बजाय टेलीविजन देखने का तात्पर्य ही शुद्ध व्यावसायिकता तक सीमित हो गया है । रुचि, विचारों और रचनात्मकता से हटकर व्यापारिक रुचि बन गई है । लगता यह है कि 21वीं सदी में भी यही व्यावसायिक समाज छाया रहेगा ।

प्रसार भारती का उल्टी दिशा में जाना

दरअसल, दूरदर्शन और आकाशवाणी की सारी बुराइयों और कमियों का दोष सरकार पर डालकर कहा जाता है कि सरकारी नियंत्रण में होने के कारण इनमें बुराइयां बड़ी हैं । इसमें सन्देह नहीं कि सत्ता में रहने वाली पार्टी या राजनैतिक दल ने दूरदर्शन एवं आकाशवाणी का समय-समय पर अपने हितों एवं दुष्प्रचार के लिए इस्तेमाल किया है जैसा कि पूर्व प्रधानमंत्री के पूर्व में व्यक्त किए गए शब्दों से स्पष्ट है । व्यावसायिकता (प्रोफेशनेलिज्म) को राजनीतिक दलों की तुलना में कम अहमियत मिली । प्रसार भारती अधिनियम लाया गया ताकि इन दोनों-सशक्त माध्यमों को मजबूत आधार दिया जा सके । संसद ने इसे पारित किया और 15 सितम्बर, 1997 को यह लागू किया गया । प्रसार भारती वोर्ड का गठन हुआ और उसने अपना काम प्रारम्भ किया । यह एक सही दिशा में कदम था लेकिन प्रसार भारती के लिए रास्ता सरल नई हुआ । इसके मुख्य कार्यकारी ने गम्भीर विवाद उत्पन्न किए । प्रसार भारती में कई सदस्यों की नियुक्ति न होने पाने से कई स्थान खाली छूट गए । प्रमोद महाजन के सूचना एवं प्रसारण मंत्री के कार्यकाल में सरकार ने प्रसार भारती को भंग करने का संकेत दिया ।

भारतीय जनता दल की दूरदर्शन को स्वायत्तता देने की पुरानी प्रतिज्ञा भुला दी गई । यदि यह कार्य करना सफल हो जाता तो आपातकाल की तरह ही एक दुखद घटना हो जाती । फिर अरुण जेतली सूचना एवं प्रसारण मंत्री बने । उन्होंने इसके व्यावसायिक ढांचे (प्रोफेशनल करेक्टर) एवं मार्केटिंग विभाग को मजबूत बनाने की घोषणा की । वर्तमान कार्यक्रमों को बेहतर बनाने के लिए बेहतर लोगों की तलाश करने के कार्य की भी वकालात की । इस प्रकार प्रसार भारती के साथ गुणवत्ता एवं व्यावसायिकता (प्रोफेशनलिज्म) जोड़ने का विचार आया । जेतली

ने प्रसार भारती के ढांचे की पुन: समीक्षा के लिए विशेषज्ञों को नियुक्त करके एक समिति बनाई । लेकिन अभी यह अन्दाज लगाना असुरक्षित और खतरे की बात होगी कि सरकार का 'प्रोफेशनलिज्म' का तात्पर्य 'मार्केटिंग' के पक्ष तक सीमित है या इसका केन्द्र बिन्दु कार्मिक और कार्यक्रमों को तैयार करने की क्षमताओं को, उजागर करने की क्षमताओं को उजागर करके 'प्रसार भारती' को बल देने की ओर है ।

नई सहस्त्राब्दी और नई चुनौतियां

नई सदी शुरू हो चुकी है । इसमें नई जिम्मेदारियों और चुनौतियों का सामना करने के लिए अपनी क्षमताओं को परखना और

अपने को नई चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करना, यह कार्य दूरदर्शन के सामने है। अभी तक एक राष्ट्रीय प्रसारण संगठन की अपनी भूमिका को ठोस ढंग से निभाने की दिशा में अपनी छाप छोड़ने में यह संगठन पूरी तरह सफल दिखाई नहीं देता । जहाँ तक प्रसारण के नए क्षितिजों को छूने और नई प्रकृतिया स्थापित करने का प्रश्न है, यह प्रसारण संगठन, कार्यक्रमों के निर्माण, तकनीकी परफोरमेंस, प्रबन्धन एवं भावी योजनाएं एवं धारणाएं विकसित करने की दिशा में मात्र विदेशी नेटवर्क्स की नकल करने की ओर अधिक उन्मुख है । यह एक तरह की दुखद टिप्पणी है-दूरदर्शन की कार्यशैली पर । जहां तक दूरदर्शन के ऑडियो, पिक्चर गुणवत्ता, रंगीन उत्पादन, संकेत चिन्हों या कलर-सिग्नल्स या सम्पादन या रिकार्डिंग 'स्टेन्डर्ड' आदि का प्रश्न है अर्थात् इसकी तकनीकी क्षमता का सवाल है दूरदर्शन कहीं भी अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों के अनुरूप प्रतिस्पर्द्धी नहीं है । विदेशी प्रसारणों की तुलना में दूरदर्शन के कार्यक्रमों का प्रसारण गुणवत्ता की दृष्टि से कमजोर नजर आएगा ।

नवीन सदी में 'दूरदर्शन की दशा और दिशा' के सन्दर्भ में सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के पूर्व सचिव भास्कर घोष का कहना है कि ' हम एक दिलचस्प मोड़ पर खड़े हैं । देर सवेर सीधा घर में अर्थात् डायरेक्ट टू होम (डी.टी.एच.) प्रणाली उपलब्ध होने की संभावना है । इस प्रकार की डिजिटल युक्त नई प्रणाली से दर्शक के सामने कार्यक्रमों के चयन का एक नया द्वार खुल जाएगा और विभिन्न प्रकार की सूचना एवं टेक्नॉलोजी के आपस में एक हो जाने या परिवर्तित हो जाने के परिणामस्वरूप एक नया माध्यम या माध्यमों या टेलीविजन या कम्प्यूटर्स या इन्टरनेट जैसे किसी नए माध्यम का प्रादुर्भाव होगा ।'

इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि दूरदर्शन कभी भी शिक्षा एवं सूचना देने के अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता । नई सदी में सूचनाओं और शिक्षा प्रदान करने वाले

परम्परागत तरीकों की जगह नए माध्यम लेंगे क्योंकि परम्परागत माध्यमों में नई सदी की जरूरतें पूर्ण करने की क्षमता ही खत्म हो जाएगी । ऐसे में इलेक्ट्रॉनिक माध्यम ही सहायक हो सकेंगे । बढ़ती आबादी की शैक्षणिक मांगें दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों पर निर्भर होंगी । इस प्रकार टेलीविजन शिक्षा का बड़ा माध्यम बन जाएगा और दूरदर्शन की यों जिम्मेदारियों में भी इजाफा हगा । इसे अपना विस्तार भी करना पड़ेगा और माध्यमों के क्षितिज पर उभरती यथार्थ की लकीरों को भी इसे पढ़ना होगा क्योंकि दूरदर्शन कभी भी यथार्थ की अवहेलना करके विकास की कोई मंजिल तय नहीं कर पाएगा ।

ज्ञान दर्शन-राष्ट्रीय शैक्षिक चैनल

काफी समय से हमारे यहाँ स्वतंत्र राष्ट्रीय शैक्षिक दूरदर्शन चैनल की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी । हमारे देश में टेलीविजन का पदार्पण शिक्षा और कृषि के क्षेत्र में उपयोग के लिए हु आ था ।

राष्ट्रीय शैक्षिक चैनल का श्री गणेश 26 जनवरी, 2000 को ज्ञान दर्शन चैनल के रूप में हु आ । केन्द्रीय मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने इस चैनल का उद्घाटन किया । यह राष्ट्रीय स्तर पर पांचवां (डीडी-1, मैट्रो, स्पोर्ट्स, न्यूज तथा ज्ञान दर्शन) टीवी. चैनल बन गया है । ज्ञान दर्शन चैनल के सिग्नल सायं 5.00 बजे से 9.00 बजे 4170 मेगाहर्ट्ज, वर्टीकल पोलराइजेशन (ट्रासपोन्डर सी-12 आन इनसेट 2बी 935 डिग्री पूर्व) पर उपलब्ध है । इसे डिश एंटीना की सहायता से भी देखा जा सकता है ।

'ज्ञान दर्शन' में प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रमों का प्रसारण किया जा रहा है ।

प्रसार भारती

उपग्रहों के प्रयोग व अन्य वैज्ञानिक एवं तकनीकी खोजों के कारण पिछले कुछ सालों के प्रसार-प्रसार माध्यम अत्यधिक रूप से सक्षम हो गए हैं । इसके प्रयोग और प्रभाव की ओर सभी राष्ट्रों का ध्यान गया । वास्तविक रूप से तो किसी भी अध्ययन के आधार पर प्रचार-प्रसार माध्यम के प्रभाव का सही अनुमान तक नहीं लग पाया है और समाजशास्त्रियों के लिए यह कहना कठिन है कि कौन-कौन से सामाजिक परिवर्तनों तथा राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के लिए प्रचार प्रसार माध्यम कहां तक जिम्मेवार हैं । परन्तु इस मान्यता को भी नकारा नहीं जा सकता कि इन माध्यमों के द्वारा प्रसारित सूचना परोक्ष व अपरोक्ष रूप से जन साधारण के मस्तिष्क व मन में अपमी छाप छोड़ जाती है । इस छाप का प्रभाव सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक जीवन के साथ-साथ शिक्षा, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, सुरक्षा, आर्थिक, नैतिक, चारित्रिक दृष्टिकोण पर भी पड़ता है । इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर प्रत्येक राष्ट्र अपने प्रचार-प्रसार माध्यम के लिए नीति निर्धारित करता है ।

इसी ध्येय को समक्ष रखकर भारत सरकार दूरदर्शन के फैलाव के साथ-साथ इनके सही उपयोग के लिए चिन्तित थी । इसके निवारण के लिए प्रसार भारती विधेयक पारित किया गया इस विधेयक में क्या है? इसके द्वारा किस प्रकार प्रचार माध्यम अर्थात् आकाशवाणी व दूरदर्शन

अपना कार्य सुचारू रूप से कर सकेंगे व कहाँ तक इस विधेयक का लाभ उठाया गया अथवा जा सकता है आदि मूल प्रश्नों को इस लेख में सूक्ष्म रूप से लिया गया है ।

प्रसारण का समय, धन व अन्य तकनीकी साधन सीमित थे, अत: शिक्षा व अन्य विकासात्मक उपयोगी कार्यक्रमों का ह्रास स्वाभाविक था । इस रेडियो और टेलीविजन माध्यमों की लोकप्रियता को देखते हुए राजनीतिक क्षेत्र के मनीषियों के मन का दूरदर्शन जैसे माध्यम का प्रयोग अपनी पार्टी व सरकार के लिए करने को लालायित होना सहज ही था । ऐतिहासिक रूप में इसका प्रयोग, कितना सरल व लाभदायक सिद्ध हुआ इसे तो इतिहासकार ही बता पाएंगे । आज की स्थिति में जब अनेक चैनलों से प्रसारण चल रहा हो तो प्रत्येक चैनल का प्रभाव सीमित ही नहीं अपितु तुलनात्मक दृष्टिकोण के लिए दर्शक को प्रोत्साहित कर ऐसी स्थिति में ला देता है जिसकी कल्पना राजनेताओं और मनीषियों के लिए असम्भव होती जा रही है । जो भी पार्टी सत्ता में आती है उस पर विरोधी पार्टी इस माध्यम के दुरुपयोग का लांछन लगाती आई है । ऐसी स्थिति से उभरने के लिए और इस माध्यम को पुन: अपने मूलभूत सिद्धान्तों पर मुक्त रूप से कार्य करने के लिए सक्षम बनाने हेतु अनेकानेक समितियों का निर्माण हुआ जैसे चंदा कमेटी, मसानी कमेटी, वर्गीस कमेटी, जोशी कमेटी आदि । सभी समितियों की सिफारिशों पर समय-समय पर विचार-विमर्श होता रहा पर राजनैतिक कारणवश कोई निर्णय न हो पाया । अन्त में 1990 में भारत सरकार ने प्रसार भारती विधेयक पारित किया ।

प्रसार भारती विधेयक

'प्रसार भारती विधेयक-1990' को लोकसभा ने 30 अगस्त, 1990 को स्वीकृत कर इसे राज्य सभा को भेजा । 5 सितम्बर, 1990 को राज्य सभा ने कुछ सुझाव दिए जिन्हें लोकसभा में मान्यता देकर 6 सितम्बर को इस विधेयक को पारित किया गया । भारत के राष्ट्रपति की स्वीकृति इसे 12 सितम्बर, 1990 को प्रदान की गई । इसे 1990 का एक्ट नं. 25 माना गया । इसका मुख्य ध्येय ' भारतीय प्रसारण निगम ' की जिसका नाम प्रसार भारती होगा, स्थापना का उपलब्ध करने, उसके गठन, कृत्य तथा शक्तियाँ परिनिश्चित करने और उससे सम्बद्ध था । उनके आनुषंगिक विषयों का उपलब्ध करने के लिए भी व्यवस्था रखी गई ।

अधिनियम

भारत गणराज्य के इकतालीसवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियम को इसके चार अध्यायों, प्रारंभिक, प्रसार भारती, स्थितियाँ, वित्त और लेखे तथा प्रकीर्ण में बांटा गया । पहले अध्याय में-

(i) संक्षिप्त नाम विस्तार और प्रारम्भ व (ii) परिभाषाएं रखी गई जो इस प्रकार हैं

(अ) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम प्रसार भारती (भारतीय प्रसारण नियम) अधिनियम 1990 है ।

(ब) इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत पर है ।

(स) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा नियत करें।

परिभाषाएं

इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हों....... यूं तो (के) से लेकर (अ) तक चौबीस परिभाषाएं है परन्तु इस लेख के लिए कुछ मुख्य परिभाषाएं इस प्रकार हैं-

(क) 'आकाशवाणी से अभिप्रेत है ऐसे कार्यालय, केन्द्र और अन्य स्थापन, चाहे वे किसी भी नाम से ज्ञात हों, जो नियत दिन के ठीक पूर्व, संघ के सूचना और प्रसारण मंत्रालय के आकाशवाणी के महानिदेशक के भाग थे या उसके अधीन थे ।'

(ख) प्रसारण से अभिप्रेत है अन्तरिक्ष से या केबलों से होकर वैद्युत चुंबकीय तरंगों के संप्रेषण द्वारा सभी प्रकार के चिह्नों, संकेत, लेखन, चित्र, प्रतिबिंब और ध्वनिज जैसे किसी भी रूप में संचार का प्रसार, जिनका प्रयोजन साधारण जनता द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से रिले केन्द्रों के माध्यम से ग्रहण किया जाना है और उसके सभी व्याकरणिक रूपभेदों और सजातीय पदों का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा ।

(ग) 'दूरदर्शन' से अभिप्रेत है ऐसे कार्यालय, दृश्य केन्द्र और अन्य स्थापन चाहें वे किसी भी नम से ज्ञात हो जो नियम दिन के ठीक पूर्व, संघ के सूचना और प्रसारण मंत्रालय के दूरदर्शन महानिदेशक में भाग में थे या उसके अधीन थे ।

इसके अतिरिक्त बोर्ड प्रसारण परिषद, अध्यक्ष निर्वाचित बोर्ड सदस्य, नाम निर्दिष्ट बोर्ड सदस्य, 'अव्यपगमनीय निधि', अंशकालिक बोर्ड सदस्य आदि सभी उपयुक्त शब्दों को परिभाषित किया गया है जो अलग-अलग धाराओं में प्रयुक्त किए गए हैं ।

लगभग 7 वर्ष बाद 15 सितम्बर, 1997 को भारत सरकार ने, जब जयपाल रेड्डी सूचना और प्रसारण मंत्री थे, इस अधिनियम को लागू किया । उस समय वरिष्ठ पत्रकार निखिल चक्रवर्ती को इसका अध्यक्ष मनोनीत किया गया । या यूं कहिए कि अध्याय दो की धारा (3) निगम की स्थापना और संरचना का प्रथम अंश का प्रारम्भ हु आ ।

वास्तव में अध्याय 2 का मूल प्रसार भारती है और इसमें (3) निगम की स्थापना और संरचना की तारीख, नाम, नियमित निकाय, उसका शाश्वत उत्तराधिकार मुख्य कार्यालय कहाँ होगा, 3 (4) निगम के कार्यकलापों का साधारण अधीक्षण, निदेशन, प्रबन्ध प्रसार भारती बोर्ड में निहित होगा जो सभी ऐसी शक्तियों का प्रयोग और सभी ऐसे कार्य और बातें कर सकेगा जो इस अधिनियम के अधीन निगम द्वारा की जा सकती हैं ।

3 (5) बोर्ड निम्नलिखित से मिलकर बनेगा अर्थात्-

(क) एक अध्यक्ष

(ख) एक कार्यपालक बोर्ड सदस्य

(ग) एक बोर्ड सदस्य (वित्त)

(घ) एक बोर्ड सदस्य (कार्मिक)

(ङ) छः अंशकालीन बोर्ड सदस्य

(च) महानिदेशक (आकाशवाणी) पदेन

(छ) महानिदेशक (दूरदर्शन) पदेन

(ज) संघ के सूचना और प्रसारण मंत्रालय का एक प्रतिनिधि

(झ) निगम के कर्मचारियों के दो प्रतिनिधि, एक इंजीनियरिंग दूसरा अन्य कर्मचारियों द्वारा निर्वाचित

निगम को ऐसी समितियाँ नियुक्त करने का अधिकार दिया गया है, जो उसके कृत्यों और कर्तव्यों के दक्ष पालन, प्रयोग और निर्वहन के लिए आवश्यक हों । परन्तु प्रत्येक समिति के सभी व अधिकांश सदस्य, बोर्ड सदस्य होंगे और यदि कोई ऐसा कोई सदस्य है जो बोर्ड का सदस्य नहीं है, तो उसे मतदान का अधिकार नहीं होगा । निगम ऐसी रीति से और ऐसे प्रयोजनों के लिए, जो विनियमों द्वारा उपबिन्धत किए जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को जिनकी सहायता या सलाह की उसे आवश्यकता हो अपने साथ सहयुक्त कर सकेगा और इस प्रकार सहयुक्त व्यक्ति उन प्रयोजनों से सुसंगत चर्चा में भाग ले सकेगा जिसके लिए उसे सहयुक्त किया गया है पर उसे मतदान का अधिकार नहीं होगा । परन्तु नियुक्ति का प्रावधान इसलिए नहीं है कि किसी समिति व बोर्ड में कोई रिक्त है या कोई त्रुटि है ।

अध्याय दो धारा (4) के अन्तर्गत अध्यक्ष और अन्य बोर्ड सदस्यों की नियुक्ति का प्रावधान है जिसके अनुसार अध्यक्ष की ओर से पदेन बोर्ड सदस्यों, नाम निर्दिष्ट बोर्ड सदस्यों और निर्वाचित बोर्ड सदस्यों के सिवाय अन्य बोर्ड सदस्यों की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा एक समिति की सिफारिश पर की जाएगी । इस समिति में निम्नलिखित सदस्य होंगे-

(क) राज्य सभा का सभापति अर्थात् उप-राष्ट्रपति समिति के अध्यक्ष होंगे ।

(ख) प्रेस परिषद अधिनियम, 1978 (1978 का 37) की धारा 4 के अधीन स्थापित भारतीय प्रेस परिषद का अध्यक्ष और

(ग) भारत के राष्ट्रपति का नाम निर्देशित

(4) उपधारा (3) में अध्यक्ष व अंशकालिक बोर्ड सदस्यों के चुनाव के लिए ज्ञान व अनुभव के बारे में कहा गया है, जो इस प्रकार है-' अध्यक्ष और अंशकालिक बोर्ड सदस्य सार्वजनिक जीवन में विख्यात् व्यक्ति होंगे, कार्यपालक बोर्ड सदस्य ऐसा व्यक्ति होगा जिसे प्रशासन, प्रबन्ध, प्रसारण, शिक्षा, साहित्य, संस्कृति, कला, संगीत, नाट्यशास्त्र या पत्रकारिता जैसे विषयों के संबंध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है, बोर्ड सदस्य (वित्त) ऐसा व्यक्ति होगा जिसे वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है और बोर्ड सदस्य (कार्मिक) ऐसा व्यक्ति होगा जिसे प्रबन्ध और प्रशासन के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है ।'

यहां यह बात विचारणीय है कि उपरोक्त उपधारा के अनुसार कहीं भी इस बात को नहीं कहा गया कि इन व्यक्तियों को आकाशवाणी' व दूरदर्शन जैसी किसी भी संस्था का अनुभव होना आवश्यक है । वास्तविकता में यह उचित होता यदि यहां पर ऐसे व्यक्ति के चयन का प्रावधान होता जिसे आकाशवाणी, दूरदर्शन व फिल्म व समान रूपी संस्थाओं व संस्था को सफलतापूर्वक चलाने का अनुभव होता । रेडियो और दूरदर्शन के संबंध में बनी सभी कमेटियों की रिपोर्टो में यह बात उभर कर आई है कि इन संस्थाओं के पिछड़ेपन का कारण वहाँ के वित्त व कार्मिक अधिकारियों व महानिदेशकों की इन संस्थाओं व इनमें कार्यरत लोगों व कार्यक्रमों की प्राथमिकताओं से अनभिज्ञता ही है । यहां की कार्यप्रणाली एक आम कार्मिक सहकारी कार्यालय

से भिन्न है । यदि प्रसार भारती के बनने के बाद भी बोर्ड व अन्य क्षेत्रों के मनीषियों की यही दशा रहती है तो फिर क्या कहना? उदाहरण के रूप में शिक्षा संस्थान में पड़ाने वाले अध्यापकों की संख्या कार्मिक विभाग में अधिक होती है । परन्तु आकाशवाणी व दूरदर्शन में तकनीकी व कार्मिक लोगों का बाहु ल्य व कार्यक्रम से सम्बन्धित लोगों की कमी है । सुविधाएं भी अधिकतर कार्मिक व तकनीकी क्षेत्र में बंट जाती है । यह कहना आश्चर्य की बात है कि बोर्ड के निर्माण के समय पूरे भारत में एक भी ऐसा सदस्य नहीं मिला जो दूरदर्शन अथवा रेडियो का अनुभवी होता ।

प्रसार भारती की कुछ विशेषताएं इस प्रकार हैं- धारा 6 (3) के अनुसार अंशकालिक बोर्ड सदस्यों की पदावधि छह वर्ष होगी किन्तु उनमें से एक तिहाई बोर्ड सदस्य प्रति दूसरे वर्ष की समाप्ति पर सेवानिवृत्त हो जाएंगे । पहली बार बनाए सदस्यों में से कौन से एक तिहाई सदस्य दो वर्ष बाद सेवानिवृत्त होंगे, निर्णय राष्ट्रपति आदेश द्वारा करेंगे ।

6 (4) के अनुसार निर्वाचित बोर्ड सदस्य की पदावधि दो वर्ष या जब वह निगम का कर्मचारी नहीं रहता है तब तक से जो भी पहले होगी ।

आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए नियुक्त या निर्वाचित व्यक्ति उस पदावधि की अनवरित अवधि के लिए पद धारण करेगा जिसके लिए उसका पद पूर्ववर्ती, यदि ऐसी रिक्ति न हुई होती तो पद धारण करता।

अध्यक्ष व बोर्ड के सदस्यों को हटाया जाना उच्चतम न्यायालय और राष्ट्रपति द्वारा उसे दिए गए निर्देश पर ही संभव है । वैसे वे सभी नियम जो किसी भी वरिष्ठ पद पर आसीन अधिकारी को भारतीय संविधान के अनुसार किसी पद पर रहने के लिए अयोग्य बनाते हैं निगम के अध्यक्ष व बोर्ड के सदस्यों पर लागू होते हैं तथा राष्ट्रपति ऐसी स्थिति में ऐसे अध्यक्ष या ऐसे पूर्वकालिक बोर्ड सदस्य को आदेश द्वारा पद से हटा सकते हैं ।

बोर्ड के अधिवेशन

8 (1) बोर्ड ऐसे समय और स्थानों पर अधिवेशन करेगा और अपने अधिवेशनों में कार्य संचालन के बारे में (जिसके अंतर्गत अधिवेशनों में गणपूर्ति भी है) प्रक्रिया के ऐसे नियंमों का अनुपालन करेगा जिसका विनियमों में उपलब्ध किया जाये । पर प्रतिवर्ष कम से कम छह अधिवेशन होंगे और एक अधिवेशन के बीच तीन मास का अंतर नहीं होगा । बोर्ड अध्यक्ष की अनुमति के बिना लगातार तीन अधिवेशनों में अनुपस्थिति होने पर बोर्ड सदस्य के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने अपना पद रिक्त कर दिया है ।

धारा (9) व (10) में निगम के अधिकारी और अन्य कर्मचारियों के नियंत्रण, निबंधन और शर्तो तथा चयन हेतु बोर्डो की स्थापना के बारे में वर्णन है । धारा (11) विद्यमान कर्मचारियों की सेवा का निगम को अंतरण के विषय में है और इनको लागू करने का प्रावधान जहाँ एक और निगम बनाने के मूल कारण को निरर्थक करती है वहां इसके उपलब्ध इतनी जटिलता से परिपूर्ण हैं कि निगम के उस काल्पनिक रूप में आने में शायद एक पूरी सदी बीत जाए, यह कहना अनुचित न होगा कि आने वाले समय में सरकारी और न्यायिक दृष्टिकोण की गुत्थियां सुलझाते- सुलझाते भारती का मूल रूप धूमिल नहीं अदृश्य हो चुका होगा । अचरज इस

बात का है कि अधिकतर रूप में या यूं कहिए प्रत्येक रूप में सरकारी कायदे कानून व स्वीकृति के बिना निगम कुछ नहीं कर सकेगा । न जाने यह कैसी स्वायत्तता है?

निगम के कृत्य और शक्तियाँ

धारा 12 (1) के अनुसार निगम का यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वह जनता को जानकारी दे, शिक्षित करने और उसका मनोरंजन करने के लिए और रेडियो तथा दूरदर्शन का प्रसारण संतुलित विकास करने के लिए लोक प्रशासन सेवाओं का आयोजन संचालन करे । यहां पर यह स्पष्टीकरण दिया गया है कि शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि इस धारा के उपबंध भारतीय तार अधिनियम 1885 (1885 का 13) के अतिरिक्त, न कि उनके अल्पीकरण में, होंगे-

निगम अपने कृत्यों के निर्वहन में निम्नलिखित उद्देश्यों से मार्गदर्शन प्राप्त करेगा, अर्थात :-

(क) देश की एकता और अखण्डता तथा संविधान में दिए गए मूल्यों को अक्षुण्ण रखना।

(ख) सार्वजनिक हित के सभी राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय विषयों की निष्पक्ष, सत्य और उद्देश्यपूर्ण जानकारी प्राप्त करने के नागरिकों के अधिकार को सुरक्षित रखना और सूचना को, जिसके अन्तर्गत अपनी कोई राय या विचारधारा का पक्षपोषण किए बिना परस्पर विरोधी विचारों को प्रस्तुत करना भी है, उचित तथा संतुलित रूप से प्रस्तुत करना ।

(ग) शिक्षा और साक्षरता के प्रसार, कृषि, ग्रामीण विकास, पर्यावरण, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों की ओर विशेष ध्यान देना।

(घ) समुचित कार्यक्रमों के प्रसारण द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों की विविध संस्कृतियों और भाषाओं के पर्याप्त कार्यक्रम देना ।

(ङ) क्रीड़ा और खेलकूद के पर्याप्त कार्यक्रम देना जिससे कि स्वस्थ स्पर्धा और खेलकूद की भावना को प्रोत्साहन मिले ।

(च) युवकों की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर समुचित कार्यक्रम देना ।

(छ) महिलाओं की स्थिति और समस्याओं के संबंध में सूचना देना, राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करना तथा महिलाओं के उत्थान के लिए विशेष ध्यान देना ।

(ज) सामाजिक न्याय में अभिवृद्धि करना तथा शोषण, असमानता और अस्पृश्यता जैसी बुराइयों का सामना करना तथा समाज के दुर्बल वर्गों के कल्याण को अग्रसर करना।

(झ) श्रमजीवी वर्गो के अधिकारों की रक्षा करना और उनके कल्याण को अग्रसर करना।

(ञ) ग्रामीण जनता और जनता के दुर्बल वर्गो तथा सीमावर्ती प्रदेशों, पिछड़े या दूरस्थ क्षेत्रो के के निवासियों की सेवा करना ।

(ट) अल्पसंख्यकों और जनजाति समुदायों की विशेष आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए समुचित कार्यक्रम देना ।

(ठ) बालकों, अंधों, वृद्धों, विकलांगों तथा अन्य निर्बल वर्ग के लोगों के हितों की रक्षा करने के लिए विशेष उपाय करना ।

(ड) भारत की भाषाओं में सम्प्रेषण में वृद्धि करते हुए इस प्रकार प्रसारण करना जिससे राष्ट्रीय एकता की अभिवृद्धि हो और प्रत्येक राज्य में उस राज्य की भाषाओं में प्रादेशिक सेवाओं का विस्तार करना ।

(ढ) समुचित प्रौद्योगिकी को चुनकर और उपलब्ध प्रसारण आवृत्ति का सर्वोत्तम उपयोग करके व्यापक कार्यक्रम देना और यह सुनिश्चित करना कि ग्राहयता उच्च कोटि की हो ।

(ण) रेडियो और दूरदर्शन प्रसारण प्रौद्योगिकी को निरंतर अद्यतन बनाने के लिए अनुसंधान और विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा देना ।

(त) विभिन्न स्तरों पर प्रसारण के अतिरिक्त चैनल स्थापित करके प्रसारण सुविधाओं का विस्तार करना ।

(3) विशिष्टतया और पूर्वगामी उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, निगम निम्नलिखित कार्य करने के लिए ऐसे उपाय कर सकेगा जो यह ठीक समझे, अर्थात्

(क) यह सुनिश्चित करना कि कार्यक्रमों को देने और बनाने के लिए प्रसारण का संचालन लोक सेवा के रूप में हो रहा है ।

(ख) रेडियो और दूरदर्शन के लिए समाचार-संग्रह प्रणाली की स्थापना करना ।

(ग) प्रसारण के लिए खेलकूद और अन्य आयोजनों, फिल्मों, धारावाहिकों, अवसरों, अधिवेशनों, समारोहों, सार्वजनिक रुचि की अन्य घटनाओं की बाबत कार्यक्रमों और अधिवेशनों या विशेषाधिकारों का क्रय करना या अन्यथा अर्जित करने के लिए बातचीत करना और सेवाओं के लिए ऐसे कार्यक्रमों, अधिकारों या विशेषाधिकारों के आवंटन की प्रक्रिया स्थापित करना ।

(घ) रेडियो, दूरदर्शन और अन्य सामग्री के पुस्तकालय या पुसाकालयों की स्थापना कराना और उनका अनुरक्षण करना ।

(ङ) समय-समय पर ऐसे कार्यक्रम, श्रोता अनुसंधान, विपणन या तकनीकी सेवा संचालित करना या कराना जो ऐसे व्यक्तियों की और ऐसी रीति से तथा ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन रहते हुए दिए जा सके जो निगम ठीक समझे ।

(च) ऐसी अन्य सेवाओं की व्यवस्था करना, जो विनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए।

आजकल जो कार्यक्रम दूरदर्शन पर चल रहे हैं उनसे ऐसा कुछ भी नहीं झलकता कि प्रसार- भारती ऊपर लिखे उद्देश्यों व लक्ष्यों के प्रति निष्ठावान है ।

संसदीय समिति

बाईस संसद सदस्यों की एक संसदीय कमेटी का प्रावधान अनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संग्रहणीय मत द्वारा रखा गया है, इस समिति का मुख्य कार्य इस बात की निगरानी रखना है कि निगम अपने कृत्यों का निर्वहन इस अधिनियम के उपबंधों और विशेष रूप से धारा (12) में उप वर्णित उसके उद्देश्यों के अनुसार करता है और उस पर संसद को रिपोर्ट प्रस्तुत करेगी ।

प्रसारण परिषद

धारा (14) में प्रसारण परिषद की स्थापना, उसमें सदस्यों की पदावधि और उनको हटाया जाना आदि के बारे में विवरण दिया गया है । यह प्रेस परिषद के आधार पर ही किया गया है ।

इसके अन्तर्गत ही धारा (15) के अनुसार प्रसारण परिषद ग्रहण करेगी और उन पर विचार करेगी अर्थात्-

(क) कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह जो यह अभिकथित करता है कि कोई कार्यक्रम या प्रसारण या नियम का विनिर्दिष्ट मामलों में या साधारणतया कार्यकरण उन उद्देश्यों के अनुसार नहीं है, जिनके लिये निगम स्थापित किया गया है ।

(ख) कोई व्यक्ति (निगम के किसी अधिकारी या कर्मचारी से भिन्न) जो यह दावा करता है कि निगम के किसी कार्यक्रम के प्रसारण के संबंध में उनके साथ किसी रीति से अन्यायपूर्ण या अनुचित व्यवहार किया गया है (जिसके अंतर्गत उसकी एकांतता का अनधिकृत अतिक्रमण, दुरूपदेशन, विकृति या वस्तुनिष्ठा का अभाव है) ।

आस्तियाँ, वित्त और लेखे से संबंधित है । इसमें केन्द्रीय सरकार की कतिपय आस्तियों, दायित्वों आदि का निगम को अन्तरण नियत दिन से ही से लेकर केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान, निगम निधि, धन का विनिधान, निगम का वार्षिक वित्तीय विवरण, निगम के लेखा और उसकी संपरीक्षा तथा निगम का कर के दायित्वाधीन न होना आदि के बारे में आदेश व निर्देश आदि की विवेचना की गई है । अधिकतर निगम व बन्ध आदि भारत सरकार में चल रहे नियम ही हैं ।

अध्याय-चार : प्रकीर्ण

इसमें धारा (23) से (35) तक निवेश देने की केन्द्रीय सरकार की शक्ति, केन्द्रीय सरकार की जानकारी अभिप्राप्त करने को शक्ति, कतिपय विषयों में संसद को रिपोर्ट और बोर्ड के विरुद्ध कार्यवाही के बारे में सिफारिशें, सदस्य के पद से संसद के किसी सदस्य का नियमित न होना, अध्यक्ष, बोर्ड, सदस्यों आदि का लोकसेवक' होना, वार्षिक रिपोर्ट आदि है ।

मुख्य धारा (32) में जहां पूर्वकालिक बोर्ड सदस्यों के वेतन, भत्ते, छुट्टी, पेंशन, शर्तों व नियमों की बात है वहां इस धारा की उपधारा (1) में केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबन्धों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, अधिसूचना द्वारा बना सकेगी परन्तु कार्यरत कर्मचारियों के बारे में विनियम केवल केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से ही बनाए जाएंगे ।

धारा (33) में विनियम बनाने की शक्ति जहां निगम को सौंपी गई है, वह धारा (34) के अनुसार इस अधिनियम के अधीन बनाया गया है, वहां धारा प्रत्येक विनियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा ।

'प्रसार भारती' का जो स्वरूप हमारे समक्ष आया है वह काफी हद तक असंतोषजनक था। 'प्रसार भारती' के अध्यक्ष निखिल चक्रवर्ती के निधन के उपरान्त किसी को अध्यक्ष पद पर नियुक्त नहीं किया गया और न ही अन्य रिक्त स्थानों पर किसी की नियुक्ति की गई । सुषमा

स्वराज के सूचना और प्रसारण मंत्री होने के बाद उन्होंने मूल 'प्रसार भारती' एक्ट को लागू करने का निर्णय लिया, और जयपाल रेड्डी द्वारा लाए गए संशोधन को 'लेप्स' होने दिया । इसके फलस्वरूप एम.एस. गिल को आयु अधिक होने के कारण सी.ई.ओ. के पद से हटना पड़ा। साथ ही, 22 सदस्यों के संसदीय समिति को भी 'पुनर्जीवित' कर दिया गया । हालांकि इस दशा में कोई ठोस कदम नहीं लिया गया ।

प्रमोद महाजन के सूचना एवं प्रसारण मंत्री होने बाद ऐसा लगा कि 'प्रसार भारती' को निकम्मा ठहराया जाने की पूरी जिम्मेदारी उनके ऊपर आ पड़ी हो । अनेकानेक वक्तव्यों से यह स्पष्ट होने लगा कि वह 'प्रसार भारती' को एकदम समाप्त करने पर आमादा थे । किन्तु नए मंत्रीमण्डल में उन्हें यह मंत्रालय नहीं सौंपा गया-उनके स्थान पर अरुण जेटली आए । उनके आते ही 'प्रसार भारती' के दो सदस्यों को दो वर्ष पूरे होने के कारण अलग करना पड़ा । यह निर्णय काफी कुछ विवादास्पद संभवित हुआ । अरुण जेटली ने दूसरा कदम एक नई कमेटी के गठन के बारे में लिया जो 'प्रसार भारती' के स्वरूप को पूरी तरह से आज की बदलती हुई परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उसे अधिक गतिशील और उपयोगी बनाने में सहयोगी हो । इस कमेटी में तीन सदस्य नियुक्त किये गये हैं-किरण कार्णिक, शोनू सेन और के. नारायणमूर्ति।

अब देखना यह है कि अरुण जेटली के 'प्रोफेशनलाइज्म' का अर्थ क्या उभरकर आता है? क्या वह केवल व्यावसायिक एवं विपणन सफलता तक ही सीमित रहेगा अथवा दूरदर्शन और आकाशवाणी के कार्यक्रमों को अधिक लोकप्रिय तथा उच्चतर बनाने और 'स्टॉफ- वेलफेयर' को भी सम्मिलित करेगा?

अरूण जेटली के बाद सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय का भार पुन: श्रीमती सुषमा स्वराज पर आ गया है । 'प्रसार भारती' की स्थिति, नीति एवं कार्यशैली अभी भी स्पष्ट नहीं है । देखिए आगे क्या होता है?

विश्वविद्यालय द्वारा संचालित पाठ्यक्रमों की सूची

पाठ्यक्रम का नाम		अवधि
1.	स्नातक उपाधि प्रारम्भिक पाठ्यक्रम	6 माह
2.	भोजन एवं पोषण में सर्टिफिकेट	6 माह
3.	कम्प्यूटर ज्ञान एवं प्रशिक्षण का प्रारम्भिक पाठ्यक्रम	6 माह
4.	सर्टिफिकेट इन कम्प्यूटिंग	6 माह
5.	पंचायती राज प्रोजेक्ट में प्रमाण-पत्र	6 माह
6.	संस्कृति एवं पर्यटन में प्रमाण-पत्र	6 माह
7.	महिलाओं में वैद्यानिक बोध में प्रमाण-पत्र	6 माह
8.	राजस्थानी भाषा एवं संस्कृति में प्रमाण-पत्र	6 माह
9.	बी.ए.एफ./बी.सी.एफ. (त्रिवर्षीय पाठ्यक्रम)	1 वर्ष
10.	एम.ए.(अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, इतिहास, हिन्दी)	2 वर्ष
11.	एम.बी.ए.	3 वर्ष
12.	पी.जी.डी.एच.आर.एम.	1 वर्ष
13.	पी.जी.डी.एफ.एम.	1 वर्ष
14.	पी.जी.डी.एम.एम.	1 वर्ष
15.	पी.जी.डी.एल.एल.	1 वर्ष
16.	टी.एच.एम.	1 वर्ष
17.	डी.एन.एच.ई.	1 वर्ष
18.	डी.सी.ओ.	1 वर्ष
19.	डी.एल.एस.	1 वर्ष
20.	डी.सी.सी.टी.	18 माह
21.	बी.जे.(एम.सी.)	1 वर्ष
22.	एम.जे.(एम.सी.)	2 वर्ष
23.	बी.लिब.	1 वर्ष
24.	पर्यावरण विज्ञान में स्नातकोत्तर डिप्लोमा	1 वर्ष
25.	बी.एड.	2 वर्ष
26.	पी.एच.डी.	3 वर्ष
27.	पी.जी.डी.ई.एस.डी.	1 वर्ष